चारा पत्रिका

वर्ष 12 ISSN-0973-7979 सितम्बर-दिसम्बर, 2010

भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
झांसी 284 003 (उत्तर प्रदेश)

चारा पत्रिका

वर्ष 12 ISSN-0973-7979 सितम्बर-दिसम्बर, 2010 अंक

संरक्षक
डॉ. के. ए. सिंह
निदेशक

संपादक मंडल
आर.बी. भास्कर
वरि. वैज्ञानिक एवं प्रभारी, राजभाषा
सुनील कुमार
वरि.वैज्ञानिक
सुल्तान सिंह
वरि.वैज्ञानिक
अनूप कुमार दीक्षित
वरि.वैज्ञानिक
दिनेश चन्द्र जोशी
वैज्ञानिक
प्रदीप कुमार त्यागी
वरि. तकनीकी अधिकारी

संपादक
केशव देव
सहायक निदेशक (राजभाषा)

सहयोगी
श्रीआंशकुमार द्विवेदी
निजी सचिव
अशोक कुमार सिंह
फोटोग्राफर

प्रकाशक
निदेशक
भारतीय चरागाह एवं
चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी
दूरभाष : + 91 5102730666
फैक्स: +91 5102730833
वेबसाइट: http://igfri.ernet.in
ई-मेल: igfri@igfri.ernet.in

संपर्क सूत्र
राजभाषा अनुभाग
भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
ग्वालियर मार्ग, झांसी 284 003 उ.प्र.

©2010 *सर्वाधिकार सुरक्षित भा.चरा. एवं चारा अनु.सं.* (भा.कृ.अनु.प.), झांसी

मुद्रक
एक्सपीडाइट कम्प्यूटर सिस्टम, नई दिल्ली द्वारा लेजर टाईपसेट तथा प्रिन्ट प्रौसेस, 225 डी.एस.आई.डी.सी. औखला इण्डस्ट्रियल एरिया, फेस 1, नई दिल्ली 110 020 से मुद्रित

विषय सूची

निदेशक की कलम से 2

जनवरी -अप्रैल माह में किसान भाइयों के लिए सामयिक कृषि एवं पशुपालन क्रियाएं 3

बदलते जलवायु परिवेश में चारा उत्पादन- समस्याएं एवं समाधान पुरस्कृत -। 8
- अशोक कुमार पाण्डेय

बदलते जलवायु परिवेश में चारा उत्पादन - समस्याएं एवं समाधान पुरस्कृत -।। 12
- असित बरन मजूमदार

बदलते जलवायु परिवेश में चारा उत्पादन - समस्याएं एवं समाधान पुरस्कृत -।।। 15
- रवीन्द्र सिंह चौहान

गिरती मृदा उत्पादकता-चिंता नहीं उपाय करें 18
- शेषमणि मिश्र

खाद के लिए पशुपालन : टिकाऊ खेती का एक माध्यम 21
- सनत कुमार महन्ता

अमरूद आधारित उद्यान चरागाह पद्धति 24
- सुनील कुमार, ए.के. शुक्ला एवं एच.वी सिंह

जैविक खेती (नापेड कम्पोस्ट) 27
- जय प्रकाश उपाध्याय एवं एम. सिंह

आंवले में वर्षभर किए जाने वाले कृषि कार्य 29
- अरुण कुमार शुक्ला, एस. कुमार एवं एच.वी सिंह

अर्द्धशुष्क क्षेत्र में बेर आधारित उद्यान चरागाह पद्धति 31
- सुनील कुमार, ए.के. शुक्ला एवं हर्षवर्धन सिंह

गुलांचा (गिलिरिसीडिया सेपियम)- कृषि वानिकी उपयोगी प्रजाति में एफिड का तीव्रतम प्रकोप एवं निवारण 33
- नजमुल हसन,पी.के.त्यागी एवं आर.बी.भास्कर

कांगड़ा घाटी में चरागाह क्षेत्र एवं पशुधन विकास की सम्भावनाएं 35
- जयप्रकाश सिंह, रिचा सोनी, आर.एस. चौरसिया एवं एन. कुशवाहा

चारा एवं पशुधन की घटती उत्पादकता 37
- साधना पाण्डेय

कृषि के बदलते परिवेश में किसानों की सेवा में : किसान काल सेन्टर 39
- सत्यप्रिय, एम.सिंह एवं आर.के.अग्रवाल

संस्थान की प्रचार-प्रसार गतिविधियां 41

पाठकों/किसानों के विचार 42

नोट- पत्रिका में दी गई तकनीकी जानकारी, ऑकड़े एवं विचारों के लिए संपादक मंडल/संपादक उत्तरदायी नहीं है। इस हेतु लेखक से सीधे संपर्क करें।

निदेशक की कलम से

पशुपालन, कृषकों व छोटे और भूमिहीन किसानों के लिये आज के परिदृश्य में रोजगार का सफल साधन है। आज बढ़ती आबादी के लिये रोजगार और दूध की मांग को देखते हुए इस क्षेत्र में विकास की अनेक संभावनाएं हैं। दुग्ध उत्पादन में जिन दो बातों का सबसे अधिक महत्व है वह दूध देने वाले पशुओं की संख्या तथा उससे प्राप्त दूध की मात्रा से है। इन दोनों ही बातों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष संबंध पशुओं को उपलब्ध पौष्टिक चारे व आहार से है। इसके लिए पशु या तो खुले घास के मैदानों पर निर्भर हैं या उन पर जिनमें पशु आहार उगाये जाते हैं। ऐसे खेतों की विकास दर पिछले एक दशक से 5-6 फीसदी पर स्थिर बनी हुई है। जबकि खुले चरागाह एवं घास के मैदान लगातार कम होते जा रहे हैं। यही नहीं चारे का उत्पादन साल दर साल मानसून के मिजाज पर निर्भर करता आ रहा है। मानसून के अच्छे या बुरे होने के साथ ही चारे की उपलब्धता में भी काफी उतार चढ़ाव देखने को मिलते हैं। फिर भी हमारे किसान भाई दुग्ध उत्पादन व चारे के क्षेत्र में उपलब्ध तकनीकी के प्रयोग तथा उनके वैज्ञानिक प्रबंधन से अपने पशुपालन व्यवसाय को और अधिक लाभकारी बना सकते हैं। पशुपालन तथा चारा उत्पादन के संबंध में किसी भी प्रकार की तकनीकी जानकारी तथा प्रशिक्षण के लिए किसान भाई भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी से संपर्क कर सकते हैं। हम निरंतर प्रयासरत हैं कि देश के पशुओं को उत्तम पौष्टिक आहार व हरा चारा उपलब्ध होता रहे। जिससे वे स्वस्थ रहें ओर पशुपालक उनसे भरपूर उत्पादन प्राप्त कर सकें।

मुझे प्रसन्न्ता है कि हमारे संस्थान के वैज्ञानिक, तकनीकी एवं प्रशासनिक अधिकारी व कर्मचारी सरकारी कामकाज में हिंदी के अधिकाधिक प्रयोग व मौलिक लेखन के प्रति काफी सजग हैं। उनकी यह सजगता, सरकारी कामकाज में राजभाषा हिंदी का प्रयोग हमारी राष्ट्रीय गौरव की भावना को दर्शाती है। मैं ऐसा समझता हूं कि कृषि विज्ञान के क्षेत्र में किए जा रहे अनुसंधान कार्यों व उनसे निकले परिणामों को किसानों व आम जन तक पहुंचाने में अभी हिंदी में और भी मौलिक लेखन को प्रोत्साहन की आवश्यकता है, इसलिए सभी अधिकारियों व कर्मचारियों को निरंतर राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार में सहयोग देते रहना है और इसके लिए वे सदैव प्रयत्नशील हैं।

संस्थान के राजभाषा अनुभाग द्वारा का विगत 12 वर्षों से चारा पत्रिका के लिए निरन्तर प्रकाशन हेतु प्रयास सराहनीय है। पत्रिका के पिछले अंको में हमने किसानों व जनसामान्य को पशुओं व चारे से संबंधित अति महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराने का प्रयास किया है इसके लिए हमें किसानों, प्रसार कार्यकर्ताओं एवं संबंधित जनों से बराबर प्रतिक्रियाएं/सुझाव प्राप्त होते रहते हैं जिससे हमें पत्रिका को और अधिक उपयोगी बनाने में बल मिल रहा है। प्रस्तुत अंक में संस्थान में 14-20 सितम्बर,2010 तक आयोजित हिंदी सप्ताह में सम्पन्न मौलिक लेखन की प्रतियोगिता के प्रथम तीन पुरस्कृत लेखों के समावेश के साथ-साथ चारे की विभिन्न फसलों/पशुओं एवं जनसामान्य उपयोगी जानकारी देने का प्रयास किया गया है। यह अंक निश्चित ही आपको हमारे पिछले अंकों की भांति उपयोगी साबित होगा, मुझे ऐसी आशा है। मैं इसके लेखकगणों व संपादक मंडल को धन्यवाद देता हूँ। साथ ही आने वाला नूतन वर्ष 2011 आप सभी को सुख समृद्धि, खुशियों एवं हर्षोल्लास से परिपूर्ण हो। यह अंक आपको कैसा लगा, के बारे में अपनी प्रतिक्रियाएं/सुझाव अवश्य भेजें। यदि आप भी चारे व पशुओं से संबंधित जानकारी प्रकाशनार्थ भेजना चाहते हैं तो वह सादर आमंत्रित है।

(कुमार अमरेन्द्र सिंह)
निदेशक

जनवरी से अप्रैल माह में किसान भाइयों के लिए सामयिक कृषि एवं पशुपालन क्रियाएं

जनवरी

फसलोत्पादन

गेहूं –

- समय से बोये गए गेहूं में माह के शुरु में दूसरी सिंचाई कल्ले निकलने की अवस्था (40–45 दिन)एवं तीसरी सिंचाई गांठ बनते समय (60–65 दिन) पर करें।
- देर से बाये गए गेहूं में पहली सिंचाई 20–22 दिन की अवस्था (ताजमूल अवस्था) एवं दूसरी सिंचाई 40–45 दिन बाद कल्ले निकलते समय करें।

जई –

- जई में 20–22 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करें एवं अच्छी बढ़वार के लिये कटाई के पश्चात् तुरंत सिंचाई करें।
- यदि जई का बीज लेना है तो एक कटाई के बाद बीज के लिये फसल को छोड़ दें।

गन्ना –

- गन्ने के जिन खेतों में पेडी (रैटून) रखना है उनमें खरपतवार नियंत्रण के लिये सिंचाई करके ओट आने पर गुड़ाई से खरपतवार नष्ट कर दें। आवश्यकता होने पर एट्राजिन (2.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व 600–800 ली. पानी/हे.) का छिड़काव कलिकाएं निकलते समय करें।
- गन्ने की आवश्यकतानुसार कटाई करें एवं खाली खेत की जुताई कर अगली फसल के लिये भूमि तैयारी करें।

जौ –

- जौ में दूसरी सिंचाई गांठ बनने की अवस्था (55–60 दिन) पर करें।

मक्का –

- रबी मक्का में सिंचाई 40–45 दिन की अवस्था पर करें।

चना –

- भारी भूमि में बोये गए चने में एक सिंचाई उचित रहेगी।
- परन्तु हल्की भूमि में बोये गए चने में फूल आने से पहले दूसरी सिंचाई करें।

मसूर –

- मसूर में 45–50 दिन की अवस्था पर दूसरी सिंचाई करें

राई सरसों –

- राई सरसों में दाना भरने की अवस्था पर दूसरी सिंचाई करें

बरसीम –

- बरसीम में 14–18 दिन के अंतराल पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें।
- बरसीम या अन्य हरे चारे काटकर पशुओं को खिलाएं।
- कटाई के पश्चात् अच्छी बढ़वार के लिये तुरंत सिंचाई करें।
- चारे के लिये बोयी गयी बरसीम की 20–25 दिन के अन्तराल पर कटाई करें। एवं यदि बीज लेना है तो बीज के लिये छोड़ दें।

तोरिया –

- समय से बोई गयी तोरिया कटाई के लिये तैयार होते ही कटाई कर लें। देरी करने पर दानों के बिखरने की संभावना रहती है।

बागवानी

- रबी सब्जियों की समयानुसार सिंचाई, रोग–कीट से सुरक्षा, सब्जियों की तुड़ाई एवं विपणन ।

बेर –

- बेर, फल की चिड़ियों से सुरक्षा तुड़ाई एवं विपणन

अमरूद –

- अमरूद फल की चिड़ियों से सुरक्षा तुड़ाई एवं विपणन
- इसी वर्ष नए लगे अमरूद के वृक्षों की पाला से सुरक्षा हेतु समय–समय पर थाले में पानी देते रहें एवं पौधों को घास–फूस से लकड़ी का आधार बना कर ढकें।

पपीता –

- पपीता फल की चिड़ियों से सुरक्षा तुड़ाई एवं विपणन।

शरीफा एवं अन्य फल –

- इसी वर्ष नए लगे शरीफा एवं अन्य फल वृक्षों की पाला सुरक्षा हेतु समय–समय पर थाले में पानी देते रहें एवं पौधों को घास–फूस से लकड़ी का आधार बना कर ढकें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह

सुबबूल –

- सुबबूल की टहनियों की कटाई कर हरा चारा प्राप्त करें।

फसल संरक्षण

गेहूं, जौ एवं जई –

- गेहूं की फसल को चूहों से बचाने के लिये जिंक फास्फाइड का चुग्गा प्रयोग करें।
- झुलसा रोग की रोकथाम के लिये जिंक मैग्नीज कार्बोमेट (2.0 कि.ग्रा. 800 लीटर पानी में /प्रति हे.) का 10 दिन के अन्तराल

पर दो बार छिड़काव करें।

- बिलम्ब से (दिसम्बर) में बोए गए गेहूं, जौ एवं जई में गेहूं का मामा (फैलेरिस माइनर) के नियंत्रण के लिये आइसोप्रोटूरान (0.75 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हे.1) एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के लिये 2,4-डी सोडियम साल्ट (0.5 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हे.) 600 ली पानी में घोलकर फसल की 30-35 दिन की अवस्था पर छिड़कें।
- यदि दोनों प्रकार के खरपतवार खेत में हो तो उपर्युक्त दोनों खरपतवार नाशियों का छिड़काव लाभदायक होगा।

जई -

- एक से अधिक कटाई वाली तथा बीज के लिए बोई गयी जई में प्रथम कटाई के बाद
- 30 कि.ग्रा./हे. की दर से नत्रजन का छिड़काव करें।

गेहूं -

- गेहूं की 40-45 दिन की अवस्था पर सिंचाई के बाद शेष 1/3 मात्रा का छिड़काव करें

सरसों -

- सरसों में माहू कीट के नियंत्रण के लिये मैलाथियान (50 ईसी) 1.5 लीटर, इंडोसल्फान (35 ईसी) 1.25 ली. अथवा 250 मिली. फास्फोमिडान (85 प्रतिशत) को 800 लीटर पानी/हे. में मिला कर छिड़कें।

मटर -

- मटर में चूर्णिल आसिता (पाउडरी मिल्ड्यू) रोग की रोकथाम के लिये 3.0 कि.ग्रा. गंधक 800 ली. पानी/हे. की दर से 10 दिन के अन्तराल पर दो बार छिड़कें।

पशुपालन

- शरद ऋतु में पशुओं को ठंडक से बचाने के उपाय करना चाहिए। विशेष रूप से रात के समय उन्हें पशुशाला/बाड़े के अंदर रखना चाहिए।
- संभव हो तो फर्श पर बिछावन का उपयोग करना चाहिए।
- जनवरी से अप्रैल के बीच/मध्य हरे चारे जैसे-बरसीम, जई इत्यादि की प्रचुर मात्रा उपलब्ध रहती है। इस मौसम में पशुओं को दिये जाने वाले कुल हरे चारे का 2/3 भाग बरसीम तथा 1/3 भाग जई के साथ 2-3 कि.ग्रा. सूखा चारा तथा 2-4 कि.ग्रा. दाना मिश्रण (दुग्ध उत्पादन के आधार पर) देना चाहिए।
- अधिकतर बकरियां तथा भेड़ें इसी मौसम में बच्चों को जन्म देती हैं। उन्हें ठंड से बचाने का उपाय करना चाहिए।
- प्रत्येक बच्चे को 3-5 मि.ली. तरल पैराफीन पिलाना चाहिए जिससे उनका पेट साफ हो जाता है। उन्हें खीस अवश्य पिलाना चाहिए।
- खीस बच्चों में रोगों से लड़ने की क्षमता प्रदान करता है।
- पशुओं की समय समय पर पेट के कीड़े मारने की दवा (डिवर्मिंग) (3-4 माह के अंतराल पर) चिकित्सक की सलाह से अवश्य देना चाहिए।
- पशुओं को बाह्य परजीवी (टीक्स) से बचाने के लिए मैलाथियान के एक प्रतिशत घोल को प्रभावित जगह पर लगाना चाहिए तथा धुलाई कर साफ कर देना चाहिए।
- पशुओं को सर्दी लगने की स्थिति में पशु को 30 ग्राम हल्दी, 250 ग्राम गुड़ में मिलाकर देने से पशु को सर्दी से राहत मिलती है।
- बकरी के बच्चे को फड़किया (एन्ट्रोटाक्सिमिया) से बचाव के लिए मेमनों को दो माह की उम्र पर पुन: 15 दिन बाद तथा पुन: दो माह बाद टीकाकरण करना चाहिए।
- गलघोंटू से बचाव के लिए पहला टीका 2 माह की उम्र पर पुन: 6 माह बाद प्रतिवर्ष लगवाना चाहिए।
- इस मौसम में विशेष तौर से बकरियों को प्रति वयस्क बकरी के हिसाब से 150-250 ग्राम दाना बढ़ाकर पूरक के रूप में देना चाहिए। खासकर जब वातावरण का तापमान 5-20 डिग्री सेल्सियस के बीच हो।

फरवरी

फसलोत्पादन

गेहूं -

- गेहूं की बुवाई के समय के अनुसार से दूसरी,तीसरी एवं चौथी सिंचाई 40-45,60-65 एवं 80-85 (बाली निकलते समय) दिन की अवस्था पर करें।

जौ -

- जौ के लिये तीन सिंचाइयां उपलब्ध होने पर दूसरी सिंचाई गांठ बनते समय (55-60 दिन) एवं दूधियावस्था (95-100 दिन) की अवस्था पर करें

मक्का -

- रबी मक्का में तीसरी सिंचाई 75-80 दिन चौथी 105-110दिन की अवस्था पर करें।
- तोरिया,आलू,गन्ना आदि से खाली हुए खेतों में मक्का, ज्वार की अगली फसल की बुवाई एकल या लोबिया के साथ मिलाकर करें। मक्का की कम्पोजिट आदि, ज्वार की एकल कटाई, द्विकटाई एवं बहुकटाई (सूडान टाइप) की प्रजातियां का उपयुक्त बीज दर एवं दूरी पर बोना उचित रहेगा।

मसूर -

- महावट (जाड़े की वर्षा) न होने पर मसूर में फलियां बनते समय हल्की सिंचाई लाभदायक रहेगी।

चना -

- महावट (जाड़े की वर्षा) न होने पर चना में फलियां बनते समय हल्की सिंचाई लाभदायक रहेगी।

गन्ना -

- गन्ने की आवश्यकतानुसार (15-20 दिन के अन्तराल पर) सिंचाई करते रहें।

बरसीम –

- बरसीम की सिंचाई क्रमश: 12–14 एवं 18–20 दिन के अन्तराल पर करें।
- बरसीम या अन्य हरे चारे की कटाई करें। पशुओं की आवश्यकता से अधिक होने पर सुखाकर गर्मियों के लिए भंडारित कर लें।

जई –

- चारे के लिये बोई गयी जई की सिंचाई क्रमश: 12–14 एवं 18–20 दिन के अन्तराल पर करें।

वहुबर्षीय घासें –

- खेत में अथवा मेड़ों पर बहुवर्षीय घासें जैसे नेपियर, गिनी, सिटेरिया आदि की रोपाई कर सकते हैं। इनमें रोपाई के समय 10 टन गोबर की खाद, 60 कि.ग्रा. नत्रजन एवं 60 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें

बागवानी

मटर –

- अगेती मटर की तुड़ाई के बाद शेष पौधों को चराई या चारे के रूप में प्रयोग करें।

शलजम –

- शलजम, गाजर के शेष हरे पौधे को चारे के रूप में प्रयोग करें।

गाजर –

- गाजर के शेष हरे पौधे को चारे के रूप में प्रयोग करें।

बेर –

- बेर के फलों की तुड़ाई एवं विपणन ।

पपीता –

- पपीते के अपरिपक्व फलों को तोड़कर कृत्रिम ढंग से पकाया जा सकता है।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह

सुबबूल –

- सुबबूल की पत्तियों को इकट्ठा करें।

फसल संरक्षण

गेहूं –

- गेहूं में अनावृत कण्डुए रोग से ग्रस्त बाली को तोड़कर जला दें।
- चूहों से फसल बचाने के लिये जिंक फास्फाइड से बने चुग्गे या एल्यूमिनियम फास्फाइड की टिकिया का प्रयोग करें।

जौ –

- जौ में अनावृत कण्डुए से ग्रस्त बाली को तोड़कर जला दें।
- चूहों से फसल बचाने के लिये जिंक फास्फाइड से बने चुग्गे या एल्यूमिनियम फास्फाइड की टिकिया का प्रयोग करें।

चना –

- चने में फली छेदक कीट का अधिक प्रकोप होता है। इससे बचाव के लिये मोनोक्रोटोफास (1 मिली./लीटर) अथवा इण्डोसल्फान 1.5 ली. (35 ईसी) का घोल 800 ली. पानी में बनाकर प्रति हे. की दर से छिड़काव करें।

मटर –

- मटर में चूर्णिल आसिता(पाउडरी मिल्ड्यू) रोग की रोकथाम के लिये 3.0 कि.ग्रा. गंधक, कार्बेन्डाजिम (500ग्राम) अथवा ट्राइडोमार्फ (80 ईसी) 500मिली.के 2 छिड़काव 12–14 दिन के अन्तराल पर करें।

सरसों –

सरसों में माहू कीट के नियंत्रण के लिये 1.5 ली. मैलाथियान (50 ईसी) 1.25 ली. इन्डोसल्फान (3.5 ईसी) अथवा 250 मिली फास्फोलडान (85;) को 800 ली. पानी में मिलाकर/हे. की दर से छिड़काव करें।

- माह के अंत में जायद फसल के रूप में उर्द,मूंग, मक्का (भुट्टा) आदि की बुवाई की जा सकती है।

पशुपालन :

- सर्दी के मौसम में खासकर बकरी एवं भेड़ के बच्चों को बचाकर रखना चाहिए।
- जिन बकरी एवं भेड़ के बच्चों की उम्र 2–3 माह हो उन्हें फड़किया तथा गलघोंटू से बचाव के टीके लगवा देना चाहिए।

मार्च

फसलोत्पादन

- गेहूं में बुवाई के समयानुसार पांचवी सिंचाई दूधियावस्था (100–105 दिन) पर एवं छठी/अन्तिम सिंचाई दाने भरते समय (115–120 दिन) पर करें सिंचाई हल्की करें जिससे फसल के गिरने की कम संभावना होती है।
- देर से बोयी गयी जौ की अन्तिम सिंचाई 95–100 दिन की अवस्था पर करें।
- दाने के लिये बोयी गयी जई में अन्तिम सिंचाई 100–105 दिन की अवस्था पर करें।
- भूमि अधिक सूखी होने की स्थिति में चने एवं मसूर में दाने बनते समय हल्की सिंचाई करें।
- गन्ने की पेडी (रैटून) की सिंचाई 15–20 दिन के अन्तराल पर करें।
- बरसीम–लूसर्न की सिंचाई क्रमश: 10 दिन एवं 12–14 दिन के अन्तराल पर करें।
- बहुवर्षीय घासों की सिंचाई 15–18 दिन के अन्तराल पर करें
- बरसीम की कटाई 25–30 दिन की अन्तराल पर करते रहें।
- वार्षिक घासें, चरी एवं बहुवर्षीय घासों की कटाई 30–35 दिन के अन्तराल पर करें एवं प्रत्येक कटाई के बाद 30–40 कि.ग्रा. नत्रजन/हे. छिड़काव करें।
- आने वाली गर्मी में चारा उत्पादन हेतु आलू, गन्ना, तोरिया एवं जई आदि से खाली हुए खेतों को तैयार कर मक्का, चरी अकेले अथवा लोबिया के साथ मिला कर बोएं। मक्का के लिये 40 कि.ग्रा,लोबिया के लिये 35 कि.ग्रा. चरी के लिये 25–40 कि.ग्रा. बीज (प्रजाति के अनुसार) प्रयोग करें। परन्तु मिलवां बुवाई के लिये बीज दरों में उपयुक्त आनुपातिक परिवर्तन करें।
- सुबबूल अथवा अन्य पौधों/वृक्षों की पत्तियों को सुखाकर लीफ मील बनाएं।

- मढ़ाई करने वाले यंत्रों (थ्रेसर) आदि को उचित रूप से ग्रीस आदि देकर तैयार कर लें तथा चलाकर देख लें जिससे थ्रेसिंग के समय व्यवधान न हो।
- अचानक वर्षा होने की स्थिति में कटी एवं पकी फसल को ढकने के लिए बड़ी पॉलीथीन इत्यादि तैयार रखें।

बागवानी

- पिछेती गाजर, शलजम, मटर की तुड़ाई के बाद चारा प्राप्त करें।
- आम, लीची, के बागों की सिंचाई पर ध्यान दें।
- आंवले में सिंचाई, करते समय हल्का पानी दें ताकि पत्तियां एवं पुष्पन अच्छा हो।
- पाला से बचाव हेतु लगाए गए घिराओं को हटा दें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह

- सुबबूल, अंजन वृक्ष एवं शीशम की कटाई-छंटाई कर हरा चारा प्राप्त करें।
- वन चरागाह पद्धति की स्थापना हेतु पौधशाला तैयार करें। 639 इंच की पॉलीथीन थैली में 1:1 का मिट्टी, गोबर की खाद पत्तियों की खाद मिला कर भरें।
- बीज उपचार कर वृक्षों के बीज की बुवाई करें।

फसल संरक्षण

- चूहों से फसल बचाने के लिये जिंक फास्फाइड से बने चुग्गे या एल्यूमिनियम फास्फाइड की टिकिया का प्रयोग करें।
- चने में फली छेदक कीट का अधिक प्रकोप होता है। बचाव के लिये मोनोक्रोटोफास (1 मिली./लीटर) अथवा इण्डोसल्फान 1.5 ली.(35 ईसी) को घोल 800 ली.पानी में बनाकर प्रति हे. की दर से छिड़काव करें।
- बहुवर्षीय घासों जैसे हाईब्रिड, नेपियर, गिनी, सिटेरिया घास की रोपाई पहले से तैयार खेतों में करें रोपाई से पहले 10 टन गोबर की खाद,60 कि.ग्रा. नत्रजन एवं 40 कि.ग्रा. फास्फोरस/हे. की दर से डालें।
- जायद में बोई जाने वाली उर्द मूंग की बुवाई 25-30 सेमी की दूरी पर लाइनों में (बीज दर 25-30 कि.ग्रा./हे.) करें। बीज को बुवाई से पूर्व उपयुक्त रसायनों से अवश्य उपचारित करें एवं बुवाई के पूर्व 20 कि.ग्रा. नत्रजन एवं 50 कि.ग्रा. फास्फोरस भूमि में अच्छी प्रकार मिलाएं।
- गन्ने की नयी फसल लगाने के लिये खेत में 10 टन गोबर की खाद 60-75 कि.ग्रा. नत्रजन,80 कि.ग्रा. फास्फेट एवं 60 कि.ग्रा. पोटाश/हे. भूमि में अच्छी प्रकार मिलाएं। इसके पश्चात् कम से कम तीन आंखें वाले टुकड़ों को एरीटान (0.25 प्रतिशत) अथवा एगालाल (0.5 प्रतिशत) के घोल से 5 मिनट तक उपचारित करें। गन्ने के टुकड़ों को 75-90 सेमी की दूरी पर 10 सेमी गहरी कूडों में बोयें। सहफसली खेती करने के लिये दो कतारों के बीच 90 सेमी की दूरी रखें।
- गन्ने की पेडी से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिये खरपतवार नियंत्रण पर विशेष ध्यान दें। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिये पेडी से कलिकायें निकलते समय एट्राजिन (2.0 कि.ग्रा) सक्रिय तत्व/हे. का प्रयोग करें।

पशुपालन

- पशुओं को समय-समय पर पेट के कीड़े मारने की दवा (डिवर्मिंग) (3-4 माह के अंतराल पर) चिकित्सक की सलाह से अवश्य देना चाहिए।
- पशुओं को बाह्य परजीवी (टीक्स) से बचाने के लिए मैलाथियान के एक प्रतिशत घोल को प्रभावित जगह पर लगाना चाहिए तथा धुलाई कर साफ कर देना चाहिए।
- पशुओं की संख्या अधिक होने पर उन्हें वाह्य परजीवी से बचाने के लिए डीपिंग का तरीका अपनाना चाहिए। पशुओं को बुटाक्स (0.2:) या मैलाथियान (0.1:) के घोल में डुबाया जाता है (सिर का भाग छोड़कर)।

अप्रैल

फसलोत्पादन

- देर से बोये गये गेहूं में अंतिम सिंचाई दाने भरते समय करें।
- फरवरी मार्च में बोई गयी लोबिया, मक्का एवं चरी की सिंचाई 8-10 दिन के अंतराल पर करें।
- गन्ने की पेडी / रैटून में 15-20 दिन के अंतराल पर सिंचाई करते रहें।
- लूसर्न/बहुवर्षीय घासों की सिंचाई 14-18 दिन पर करें।
- गेहूं की फसल की कटाई का यह उपयुक्त समय है फसल पकते ही कटाई करें।
- जौ की देर से बोई गई फसल पकने की उचित अवस्था में आने पर कटाई करें।
- बीज के लिए छोड़ी गयी बरसीम की दानों के पकने पर कटाई करें।
- फरवरी में चारे के लिए बोयी गयी ज्वार की कटाई 45-50 दिन की अवस्था पर करें।
- गेहूं, सरसों, चना आदि से खाली खेतों में चारे के लिए चरी की बुवाई के लिए खेत तैयार करें एवं बुवाई करें।
- भूसा अथवा अन्य फसल अवशेषों का उचित भंडारण करें।

बागवानी

- ग्रीष्म कालीन सब्जियों की सिंचाई करते रहें। रोग कीट से सुरक्षा करें।
- बेर फल की कटाई छंटाई करें। हरी पत्तियों को चारा (पाला) के रूप में प्रयोग करें। शाखाओं को बाड़ या जलाने हेतु प्रयोग करें।
- विगत वर्ष लगाए फल वृक्षों को गर्मी एवं लू से बचाव हेतु थालों में उपलब्ध घास/पुआल/पॉलीथीन की मल्चिंग करें।
- जीवनयापन हेतु सिंचाई करें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह

- सुबबूल, अंजन इत्यादि वृक्षों के बीज इकट्ठा करें।

फसल संरक्षण

- ज्वार/लूसर्न एवं बहुवर्षीय घासों की कटाई 20-25 दिन के अंतराल पर करते रहें एवं घासों में प्रत्येक कटाई के पश्चात् 30 कि.ग्रा./हे.की दर से नत्रजन का छिड़काव करें।

- पौधशाला में लगे पौधों की सिंचाई रोग एवं कीट नियंत्रण पर ध्यान दें।

पशुपालन

- यदि हरे चारे का उत्पादन उपयोग से अधिक हो तब हरे चारे को धूप में सुखा कर 'हे' के रूप में संरक्षित कर लेना चाहिए। इस प्रकार से संरक्षित हरे चारे का उपयोग गर्मी के मौसम में पूरक के रूप में प्रयोग करना चाहिए।
- मार्च-अप्रैल में भेड़ों का ऊन जरूर काटना चाहिए। यदि सम्भव हो तो यह कार्य मार्च के प्रारम्भ में कर लेना चाहिए।

❑

कभी मत सोचना कि मैं किस पद पर काम कर रहा हूं, सोचना यह कि प्रायः जिस आसन पर बैठे हैं उसके प्रति आपकी संपूर्ण निष्ठा होनी चाहिए कि हम क्या कर रहें हैं? यह महत्वपूर्ण है कि हम अपने कार्य को कितनी निष्ठापूर्वक करते हैं।

– श्रीमद् भगवद्गीता

जैसे तिनका हवा का रूख बताता है वैसे ही मामूली घटनाएं भी मनुष्य के हृदय की वृत्ति को बताती हैं।

– महात्मा गांधी

बदलते जलवायु परिवेश में चारा उत्पादन : समस्यायें एवं समाधान

अशोक कुमार पाण्डेय

पिछले कुछ दशकों में हुए तीव्र विकास से पारिस्थितिकी तंत्र में काफी बदलाव आया है, जिसका प्रभाव विश्वव्यापी जलवायु परिवर्तन के रूप में स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा है। कार्ल मार्क्स के अनुसार मानव सभ्यता जब अनियंत्रित विकास की ओर अग्रसित होती है, अपने पीछे विनाश छोड़ती जाती है। प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन के फलस्वरूप धरती का तापमान बढ़ रहा है, ग्लेशियर सिकुड़ रहे हैं, जलस्त्रोत, प्रदूषित हो चुके हैं एवं भूमि की उर्वरता कम हो रही है। प्राकृतिक आपदाओं से जानमाल के नुकसान के साथ हजारों लोगों का जीवन अस्त व्यस्त हो जाता है। देश के 17 राज्यों के 169 जिले किसी न किसी प्राकृतिक आपदाओं के शिकार होते रहते हैं। एक अनुमान के अनुसार भारत में हर साल प्राकृतिक आपदाओं से लगभग 50 अरब डालर का नुकसान होता है। जलवायु परिवर्तन से खेती भी प्रभावित होने लगी है। घटता अन्न उत्पादन विश्वव्यापी समस्या है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में जहां पशुपालन ग्रामीण आमदनी का प्रमुख स्त्रोत है, चारे की अत्यन्त कमी से जूझ रहा है। बदलते जलवायु परिवेश में चारा उत्पादन में होने वाली समस्याओं एवं समाधान पर यहां चर्चा की जा रही है।

समस्यायें

बढ़ता तापक्रम

पिछले दशकों में वातावरण में कार्बन डाई आक्साइड की मात्रा इतनी अधिक बढ़ गई है, जो पिछले हजार वर्षों में नहीं हुआ। सौ साल पूर्व की अपेक्षा पृथ्वी का तापमान 0.6 सेंटीग्रेड अधिक हो गया है और समुद्रतल की ऊंचाई 10 से 25 सेमी तक बढ़ गई है। आई.पी.सी.सी. अनुमान के अनुसार प्रति वर्ष 6 विलियन टन कार्बन वातावरण में समाहित हो जाती है, जिसका तिहाई भाग ही विश्व वन विस्तार शोषित कर पाता है। बढ़ते तापक्रम से अन्न उत्पादन में कमी के साथ फसलों के अवशेष, चरागाह एवं अन्य वनस्पतियां भी प्रभावित हो रही है। भारत जैसे देश में जहां पर कृषि फसलों की अवशेष एवं उपोत्पाद पशुओं का प्रमुख आहार है, समस्या गंभीर हो जाती है। देश के कुल बोये जाने वाले क्षेत्र के 80 प्रतिशत भाग में गेहूं और धान की खेती होती है और इनके अवशेष भूसा और पुआल की पशु आहार में भागीदारी सर्वाधिक (80-90 प्रतिशत) है। देश के अनेक भागों में धान एवं गेहूं का फसल चक्र अपनाया जाता है। धान की फसल कटते कटते नवम्बर का महीना आ जाता है परिणाम स्वरूप गेहूं की बुवाई दिसम्बर मध्य तक चलती रहती है। समस्या आ रही है लगातार कम होती शीतकाल अवधि एवं फरवरी के अंत या मार्च के प्रथम सप्ताह से तापक्रम में वृद्धि, जिससे फसल के दाने एवं भूसे की उपज प्रभावित होती है। एक आंकलन के अनुसार शीतकाल में 0.5 डिग्री सेल्सियस की अधिक तापमान वृद्धि से गेहूं के उत्पादन में 0.45 टन प्रति हे. की कमी एवं 2 डिग्री सेल्सियस की बढ़ोतरी से धान के उत्पादन में 0.75 टन प्रति हे. की कमी हो जाती है। शीतकाल कम होने से चरागाहों एवं घासों के उत्पादन पर भी प्रतिकूल असर पड़ रहा है। वर्ष 2010 की गर्मियां आने वाले समय की संदेश वाहक है जिसमें मार्च से तापक्रम 40 डिग्री से. के ऊपर चला गया और पूरे देश में गेहूं की फसल प्रभावित हो गयी।

अनियमित एवं कम होता वर्षाक्रम :

जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप अनियमित एवं कम होता वर्षाक्रम चिन्ता जनक है। देश में कुल बोये जाने वाले क्षेत्र 142 मि.हे. में 92.6 मि.हे. (65.21 प्रतिशत) क्षेत्र बारानी है। इतना बड़ा भू-भाग बारानी क्षेत्र में होने के बावजूद राष्ट्रीय खाद्य उत्पादन में इसका योगदान मात्र 44 प्रतिशत है। इन क्षेत्रों में ज्वार, बाजरा, मक्का, उर्द, चना, दाले, तिलहन, गेहूं धान आदि अधिकांश फसलें वर्षा पर निर्भर हैं। फसलों के उपज में भारी उतार चढ़ाव बना रहता है। इन क्षेत्रों में देश की सर्वाधिक पशु संख्या (70 प्रतिशत) है, जिसको सामान्य वर्षा के उपरान्त भी वर्ष पर्यन्त चारे का अभाव बना रहता है। वर्षा में थोड़े से अंतर होने पर भी इन क्षेत्रों में छोटे एवं सीमांत कृषक जो कुल किसानों के 78 प्रतिशत है, बहुत मुश्किल से अपनी जरूरत की चीज पैदा कर पाते हैं। देश में शुष्क क्षेत्र (12.05 प्रतिशत) एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्र (29.57 प्रतिशत) है, जहां वर्षा का अल्प परिमाण, उच्च वाष्पोत्सर्जन दर, क्षीण एवं अनुर्वर धरती, तेज गर्म हवा आदि फसल एवं चारा उत्पादन को अत्यन्त दुरूह बना देते हैं।

प्राकृतिक संसाधनो का क्षरण

जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप वर्षा कहीं कम होने से खेती प्रभावित होती है, तो कहीं ज्यादा होने से सैलाव आ जाता है। देश में सूखा एवं बाढ़ आम बात होती जा रही है। बाढ़ के फलस्वरूप जानमाल की क्षति होने के साथ कीमती उपजाऊ मिट्टी (16.35 टन प्रति हे. प्रति वर्ष) पानी के साथ वह जाती है जिसका 29 प्रतिशत हिस्सा समुद्र में समा जाती है, 61 प्रतिशत अन्यत्र स्थानान्तरित हो जाता है और 10 प्रतिशत जलाशयों में चला जाता है। जिससे उनकी जलधारण क्षमता 1 से 2 प्रतिशत कम हो जाती है। बढ़ते तापक्रम से वायु गति तीव्र होने से वायु द्वारा भी कीमती उपजाऊ मिट्टी का क्षरण होता है। यह विश्वव्यापी समस्या है, जहां विश्वस्तर पर 20 प्रतिशत मृदा का क्षरण हो गया है वहीं भारत जैसे देश में 57 प्रतिशत मृदा किसी न किसी रूप में क्षरित है।

बढ़ते तापक्रम एवं वर्षा की अनियमितता से देश का भूगर्भ जल संरचना एवं जल वहाव प्रभावित होता है। हमारे देश में कुल सिंचित क्षेत्र में भूमिगत जल स्त्रोत से 57 प्रतिशत, नहरों से 31 प्रतिशत एवं तालाब से 6 प्रतिशत की सिंचाई होती है। कृषि के लिए भूमिगत जल स्त्रोतों के अत्यधिक दोहन से अनेक प्रदेशों में जल स्तर काफी नीचे चला गया है। सारणी-1। भारतीय केन्द्रीय भूजल बोर्ड के अनुसार पूरे देश में औसत भू जल स्तर 4 मीटर नीचे चला गया है। अब न तो पीने का साफ पानी है, न सांस लेने को शुद्ध हवा है, और न ही उपयुक्त तथा पर्याप्त खाद्य पदार्थ हैं, प्राकृतिक सम्पदायें समाप्ति की कगार पर हैं तथा अनेक जीव जंतु, पेड़ पौधे विलुप्त होते जा रहे हैं।
(चित्र: 1 तापक्रम एवं मृदा क्षरण हेतु वृक्षों का अधिकाधिक रोपण)

परिवर्तन में प्रभावकारी कुछ मुददों पर यहां चर्चा की जा रही है (चित्र: 2 कटते वृक्ष बढ़ता तापमान)।

वन विस्तार

प्राकृतिक आपदायें बाढ़, भूकंप, सूखा, चट्टानों का खिसकना, समय पर वर्षा का न होना, बढ़ता रेगिस्तान, मौसम में अनावश्यक परिवर्तन, नदियों का घटता जल स्तर आदि से वनों का गहरा संबध है। वन आच्छादित धरती मृदा वहाव को रोकने के साथ जमीन के जल स्तर को भी संतुलित रखती है, साथ में तापमान एवं वर्षा नियंत्रण में महती भूमिका निभाती है। प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि हरियाली और वृक्ष आच्छादित क्षेत्रों में मिट्टी का कटाव 17.8 टन प्रति हे. प्रति वर्ष से घटकर 1.3 टन प्रति हे. प्रति वर्ष रह जाता है। भारत सरकार की वन नीति के अनुसार देश में एक तिहाई वन क्षेत्र होना चाहिए, जबकि वर्तमान में यह लगभग 22 प्रतिशत है। वनों में बहुत सघन वन (2.54 प्रतिशत), औसत सघन वन (9.71 प्रतिशत) एवं खुले जंगल (8.77 प्रतिशत) है। आजीविका के लिए जंगल पर निर्भर लोगों के साथ वन विभाग मिलकर संयुक्त वन प्रबंध समितियों के माध्यम से औसत सघन वन एवं खुले जंगल क्षेत्रों में अधिकाधिक वृक्षों, घासों एवं जड़ी बूटियों आदि का वृहद रोपण करने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त ग्राम वन समितियों के द्वारा जन सहभागिता के आधार पर सामुदायिक चरागाहों, ग्राम वनों, खाली एवं परती भूमि, धार्मिक स्थलों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों, रेलवे व सड़क के किनारे, आवासीय परिसरों, खेतों के मेड़ों के किनारे आदि पर भी वृहद वृक्षारोपण समय की मांग है। इससे जलवायु नियंत्रण के साथ सीमांत, छोटे किसान, भूमिहीन, बेरोजगार आदि के लिए कार्य दिवस का सृजन होगा। अभी हाल में उत्तर प्रदेश में 14000 हेक्टेयर भूमि पर 90 ग्राम वन घोषित किए गये हैं, जिसमें जनता एवं वन विभाग मिलकर ग्राम वनों का प्रबंधन और संरक्षण करेंगे। ग्राम वनों में पैदा होने वाली वनोपज के मूल्य का एक हिस्सा संबंधित गांवों को भी मिलेगा। आज इस तरह के प्रयास की पूरे देश में आवश्यकता है।

सारणी 1. कुछ प्रदेशों में अत्यधिक जलदोहन का भूगर्भ जल पर प्रभाव

भूगर्भ जल स्थिति

प्रदेश	1989			1995		
	कुल ब्लाक	धूसर ब्लाक *	अंध ब्लाक **	कुल ब्लाक	धूसर ब्लाक	अंध ब्लाक
गुजरात	183	13	6	184	12	14
हरियाणा	95	11	31	108	45	6
कर्नाटक	175	9	3	175	6	12
पंजाब	118	18	64	118	62	8
राजस्थान	227	12	21	236	45	11
तमिलनाडु	375	66	61	384	54	43

*धूसर ब्लाक - भूमिगत जल का 65-85 प्रतिशत तक दोहन
**अंध ब्लाक- भूमिगत जल का 85-100 प्रतिशत तक दोहन
स्त्रोत : भूमिगत जल सांख्यिकी 1985 एवं 1989 सिंचाई तथा ऊर्जा मंत्रालय, सिंचाई विभाग, भारत सरकार नई दिल्ली।

समाधान

जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप चार करोड़ हेक्टेयर जमीन बाढ़, 68 प्रतिशत भूमि सूखे एवं दस करोड़ आबादी प्राकृतिक आपदाओं की जद में हमेशा रहती है। विपरीत परिस्थितियों में अन्न की उपलब्धता बना ली जाती है लेकिन चारे के अभाव में हमारा कीमती पशुधन नष्ट होने लगता है। आज समय की मांग है, दीर्घ कालीन नीतियों की, जिससे जलवायु नियंत्रण के साथ खेती टिकाऊ हो एवं पशुधन स्वस्थ रहें। बदलते जलवायु

भूमि प्रयोग पद्धति में बदलाव

देश में हरित क्रांति की सफलता सदाबहार क्रांति में नहीं बदल सकी। जल स्त्रोत क्षीण हो गये हैं और धरती की उर्वरता कम हो रही है। पीने एवं कृषि के लिए जल, अन्न, चारे आदि की भावी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भूमि प्रयोग पद्धति में बदलाव एक अच्छा विकल्प है। पिछले कुछ दशकों के अनुसंधान के पश्चात् कृषि वानिकी, कृषि उद्यानिकी, कृषि वन चरागाह पद्धति एक अच्छे भूमि प्रबंध की पद्धति के रूप में उभरी है। जिसमें बहुउद्देशीय वृक्षों/झाड़ियों/बांस इत्यादि के साथ कृषि फसलें/चारा फसलें/औषधीय पौधे आदि उगाये जाते हैं। साथ ही साथ पशुपालन, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन एवं रेशम उद्योग आदि के द्वारा आर्थिक लाभ एवं पर्यावरणीय सुरक्षा प्राप्त की जाती है। खेती के साथ वृक्षों के समावेश से धूप, नमी तथा पोषक तत्वों के समुचित उपयोग से कुल उत्पादकता बढ़ जाती है तथा मृदा संरक्षण एवं उर्वरता में वृद्धि होती है। विभिन्न कृषि वानिकी पद्धतियां देश के जिन भागों में अपनाई गई हैं, परिणाम उत्साहवर्धक हैं। पोपलर आधारित कृषि वानिकी हरियाणा और पंजाब में काफी सफल सिद्ध हुई है। राजस्थान में खेजड़ी वृक्ष खेतों में आर्थिक और पर्यावरण की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी हैं। उत्तर भारत में अनेक स्थानों पर यूकेलिप्टस सागौन मेड़ों के किनारे लगाया जा

रहा है। आंवला, नीबू, बेर, अमरूद, अनार, आम, पपीता, कटहल, बेल आदि फलदार वृक्ष की खेती के साथ किसानों के लिए लाभकारी सिद्ध हो रहे हैं। इस तरह की पद्धतियों को उद्योग और बाजार व्यवस्था से संबंध करके पूरे देश में एक तंत्र के रूप में विकसित करने की आवश्यकता है। बंजर, परती एवं समस्याग्रस्त भूमियों में चारा वृक्षों के साथ घासें एवं दलहनी चारों का समावेश करके जलवायु नियंत्रण के साथ चारा उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है (सारणी-2)।

सारणी 2. विभिन्न प्रकार के लिए उपयुक्त वृक्ष एवं घासें

भूमि प्रकार	सस्य क्रियाएं	वृक्ष	घास
जल भराव क्षेत्र	पानी निकासी का प्रबंधन समतलीकरण एवं बांध तथा नहरों के किनारे रिसाव रोकने के लिए प्रबंध करना	यूकेलिप्टस रोवस्टा पू. हाइब्रिड कैजुरीना जामुन, अर्जुन आदि	ब्रेकेरिया म्यूटिका, ब्रे. ब्रेजेन्था, इकनोम्लोआ कोलोना, इजलेमा लैक्सम
बंजर एवं खाली भूमि	उचित समतलीकरण और जलागम सिद्धान्त पर पानी निकासी, जल और पोषक तत्वों की उपलब्धता के लिए मृदा की आवश्यकतानुसार प्रबंधन	देशी बबूल, सिरिस, शीषम, वकाइन, नीम, बांस, सूबबूल, अंजन आदि	सेन्क्रेस सिलिएरिस, से.सेटीजेरस, क्राइसोपोगान फुलकरा सेहिमा नरवोसल पेनिकम मैक्सिकम आदि
बीहड़ क्षेत्र	आवश्यकतानुसार उथले बीहड़ों का समतलीकरण एवं बंधी बनाना, मध्यम एवं गहरे क्षेत्र में उचित मृदा उपचार एवं जल संरक्षण	देशी बबूल, इजराइली बबूल, गंध बबूल, विलायती बबूल, नूतन सिरिस आदि	सेन्क्रस सिलिएसिस डाइकेन्थियम ऐनुलेटम ब्राथेम्लोआ इन्टरमीडिया स्टाइलो आदि
ऊसर/ क्षारीय भूमि	ऊपरी नमक की परत को खुरचना जल द्वारा प्रक्षालन, जल निकासी के द्वारा जल स्तर कम करना/ आवश्यकतानुसार जिप्सम, पाइराइट, सल्फर, देशी खाद, हरी खाद का प्रयोग	देशी बबूल, इजराइयली बबूल, विलायती बबूल, कैजुरीना, नीम, सेसवेनिया आदि	ब्राइकेरिया म्यूटिका, ब्राकोम्लोआ इंटरमीडिया, पेनिकम मैक्सिकम, डाइकेन्थियम एनुलेटम आदि

शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के लिए कृषि वानिकी एक वरदान हो सकती है। इन क्षेत्रों में खेत के किनारे मेड़ पर एवं बीच में बराबर कतारों में, एले क्रापिंग, ब्लाक रोपण आदि के द्वारा अधिकाधिक वृक्षों का समावेश चारा प्राप्ति के साथ जलवायु नियंत्रण में भी सहायक होगा।

पशुपालन आधारित खेती

फसल उत्पादन एवं पशुपालन एक दूसरे के पूरक हैं। फसल उत्पादन से पशुओं को चारा एवं खाद्य सामग्री तथा पशुधन से जैविक खाद, बैल उर्जा और खेती के अन्य कार्यों में मदद मिलती है। गोपालन आधारित कृषि व्यवस्था इस देश में पूर्व काल में श्रेष्ठ धन के रूप में स्थापित हुई जिसको महसूस किया हमारे राष्ट्रपिता ने, जिन्होंने गाय के दूध को बछड़ों के लिए प्रथम माना, जो मजबूत होकर धरती पर हल चला सके। वर्तमान में धरती का प्राण गाय के गोबर के स्थान पर कृत्रिम आक्सीजन (यूरिया आदि) दे रहे हैं और बछड़े परिदृश्य से गायव हो रहे हैं। परिणाम स्वरूप खेती की लागत बढ़ते जाने से खेती अलाभकारी होती जा रही है। ऐसे में हमें अपने पशुधन को ध्यान में रखकर फसल चक्र की नीतियां बनानी होगी। देश में धान और गेहूं की खेती 80 प्रतिशत क्षेत्र में होती है, जबकि इनके खेती में संसाधन अधिक लगते हैं। इनके स्थान पर 10-15 प्रतिशत क्षेत्रों में कमी करके,जौ, मक्का, ज्वार, बाजरा इत्यादि फसलों को बढ़ावा देने से चारे की अधिक प्राप्ति हो सकेगी। चीन में 1990 में अनाज उत्पादन 93.5 मि.हे. से 2002-2003 में 77.8 मि.हे. तक सीमित किया गया और यह कमी ज्यादातर गेहूं की खेती (15मि.हे.) में की गई और इस क्षेत्र का प्रयोग आवश्यकतानुसार अन्य फसलों के लिए किया गया। थाईलैंड में चावल की खेती में कमी करके बेवीकार्न की खेती को बढ़ावा देने से रोजगार एवं आमदनी के साथ चारे से पशुपालन के रूप में एक सफल श्रृंखला विकसित हुई। भावी आवश्यकताओं की पूर्ति विशेषकर पशुधन आहार के लिए हमें अपनी खेती व्यवस्थित करनी होगी।

जल प्रबन्धन

रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब सून अर्थात् जल ही समस्त जीव जगत का आधार है। हमें उपलब्ध जल के समुचित उपयोग एवं वर्षा जल के संरक्षण के लिए विशेष ध्यान देना होगा। देश में वर्षा जल का भंडारण लगभग 30 प्रतिशत तक हो पाता है। बाढ़ प्रबंधन के लिए नदियों को जोड़ने की एक योजना चर्चा में आई थी, लेकिन अभी उसका क्रियान्वयन होना है। यदि वर्षा का पानी बहने से रोक लिया जाए तो गांव के कुओं का जल स्तर बढ़ेगा। वर्षा का पानी नालों पर छोट-छोटे चेकडेम बनाकर रोका जा सकता है। इन चेकडेम में पानी की सुविधा होने से किसान कई फसल लेने में सक्षम होंगे जिससे गांव के लोगों का जीवन स्तर बढ़ेगा। भारत सरकार जलागम विकास के लिए हरियाली कार्यक्रम के अंतर्गत 90 प्रतिशत तक अनुदान दे रही है। इसमें ग्राम पंचायतों को पूरा अधिकार दिया गया है, वे स्वयं अपने गांव की विकास योजनाएं बनाएं, उसका संचालन और देखभाल करें। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना मनरेगा को ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यदिवस सृजन करके लोगों को रोजगार दिया जा रहा है। इसका उपयोग ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे-छोटे चेकडेम, जलागम विकास के रूप में सुनिश्चित करना चाहिए। जल एकत्रीकरण के

साथ उसके समुचित उपयोग के लिए स्प्रिंकलर एवं बूंद-बूंद सिचाई पद्धतियों को भी अपनाना होगा।

भविष्य की रूपरेखा

- सहभागी वन प्रबंध द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का अनुरक्षण।
- चरागाहों एवं विरले वनों में अधिकाधिक वृक्षों एवं घासों का समावेश।
- जैव प्रौद्योगिकी एवं नैनो टेक्नोलॉजी द्वारा सूखे के प्रति सहनशील प्रजातियों का विकास।
- वृक्षों के अधिक उत्पादन के लिए धनात्मक पेड़ों का चयन तथा उनका गुणात्मक सुधार।
- मोटे अनाजों की खेती को बढ़ावा।
- जलागम विकास।
- शुष्क/अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के लिए विशेष नीति। ❑

भारतीय भाषाएं नदियाँ हैं और हिन्दी महानदी। हिन्दी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती है। हमें इसे राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करनी ही चाहिए। मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि हिन्दी बिना हमारा काम चल नहीं सकता।

– रवीन्द्र नाथ ठाकुर

राष्ट्रीय व्यवहार में हिंदी को काम में लाना देश की एकता और उन्नति के लिए आवश्यक है।

महात्मा गांधी

पुरस्कृत -II

बदलते जलवायु परिवेश में चारा उत्पादन : समस्यायें एवं समाधान

असित बरन मजूमदार

कृषि व पशुपालन भारतीय अर्थव्यवस्था का अभिन्न अंग है। समस्त पशुपालन विशेषकर रोमन्थी पशु चारा उत्पादन पर निर्भर है तथा चारा उत्पादन बदलते जलवायु परिवेश में मानसून के अनिश्चित मिजाज पर। यह एक बिडम्बना है जिसका कोई स्थाई उपाय अब तक संभव नहीं हो पाया है जिसके फलस्वरूप अतिवृष्टि व असामयिक वर्षा, सूखा व बाढ़ चारा उत्पादन को अब ज्यादा प्रभावित करते जा रहे है। मौसम का बदलता परिवेश से कृषक वर्ग परेशान है। जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप प्राकृतिक आपदाओं ने तो चारा उत्पादन को प्रभावित किया है, साथ ही निरन्तर घटता भूजल स्तर रबी में बरसीम जैसी चारा फसलों के उत्पादन हेतु पर्याप्त सिंचाई हेतु जल के लिए समस्या बनते जा रहा है।

जलवायु परिवर्तन एवं ग्लोबल वार्मिंग

आज का किसान भी इस बात को जानने लगा है कि बदलते जलवायु से धरती गर्म होती जा रही है जिसके कारण चारा बीज के अंकुरण के लिये आवश्यक नमी का संतुलन पहले जैसा नहीं रहा। इसके अतिरिक्त रासायनिक उर्वरकों के इस्तेमाल ने चारा फसलों की गुणवत्ता के साथ साथ भूमि एवं चरागाहों की उपजाऊ क्षमता को अत्यधिक प्रभावित किया है। इन समस्याओं के लिये यदि कोई तत्व जिम्मेदार हैतो वह है ग्लोबल वार्मिंग-जलवायु परिवर्तन। जलवायु परिवर्तन पर कोपेनहेगन 2009 पर आयोजित सम्मेलन ने स्पष्ट रूप से चेतावनी दी है कि भारत सहित कई देशों की कृषि उत्पादन जलवायु परिवर्तन के कारण बुरी तरह प्रभावित होगी। इससे उबरने के लिये किसानों को जल तथा अन्य प्राकृतिक संसाधनों के संयमित दोहन की आवश्यकता है।

बदलते जलवायु परिवेश में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता

चारे की बढ़ती मांग, घटती धरती के मध्य बदलते जलवायु परिवेश में चारा उत्पादन पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। ग्लोबल वार्मिंग से चारा उत्पादन भी अछूता नहीं है। जलवायु परिवर्तन का प्रतिकूल प्रभाव कृषि, पशुपालन इत्यादि प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से सभी पर पड़ रहा है। वैज्ञानिकगण इस दिशा में सदैव प्रयत्नशील हैं कि पशुओं की पर्याप्त आहार हेतु 130 करोड़ टन चारा प्रति वर्ष देश के विभिन्न जलवायु क्षेत्रों में बदलते जलवायु परिवेश में चारा उत्पादन की नई नई तकनीकी खोज कर प्राप्त करें। अधिकाधिक चारा उत्पादन लेने हेतु जिस तरह से रासायनिक उर्वरकों का असंतुलित उपयोग किया जा रहा है, वह खरतनाक है। समय आ गया है कि अब जैविक खेती जैसी पारंपरिक कृषि की ओर ध्यान दें व इसे अपनाएं ताकि कम वर्षा और सूखे की स्थिति में पर्याप्त उपज ली जा सके। वर्तमान में करीब 1780 लाख हेक्टर बंजर भूमि का संवर्धन कर चारा उत्पादन करने में जैव उर्वरक एक प्रमुख भूमिका निभा सकते हैं।

चारा उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव : ग्लोबल वार्मिंग

ग्लोबल वार्मिंग के चलते पानी की कमी के अतिरिक्त पर्यावरण पर और उसका अप्रत्यक्ष रूप से चारा बोने वाले खेतों व चरागाहों पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता। पिछले कुछ वर्षों की घटनाएं यह इंगित करती हैं कि धरती तेजी से गरम हो रही है तथा ऋतुएं असंतुलित हो रही हैं। आपदा प्रबंधन (डिजास्टर मेनेजमेंट इन इंडिया) की एक रिपोर्ट के अनुसार हमारे देश का 85 प्रतिशत भाग किसी न किसी प्रकार की आपदाओं के दायरे में आता है जिसमें 40 मिलियन हेक्टर भूमि बाढ़, 68 मिलियन हेक्टर सूखे से प्रभावित होती है। जलवायु परिवर्तन के कारण बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण को मुख्यत: जिम्मेदार ठहराया जा रहा है। ग्लेशियर पिघलने से बाढ़ का खतरा बना रहता है जिससे चारा उत्पादन व पशुधन की हानि होती है। पाला पड़ने से रबी में बरसीम इत्यादि चारा फसलों का नुकसान होता है।

पर्यावरण असंतुलन

बदलते जलवायु परिवेश में तापमान, वर्षा, वायु इत्यादि में परिवर्तन आता है जो देश के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की होती है तथा उस क्षेत्र की चारा उत्पादन पर प्रभाव डालती है। ग्रीन हाउस से निकलने वाली गैसें जैसे कार्बन-डाय- ऑक्साइड, मिथेन, ओजोन, सल्फर-डाय-ऑक्साइड, नाइट्रस ऑक्साइड आदि वातावरण में एक परत बना लेती हैं जिसका प्रभाव वायुमंडल पर रहता है। पृथ्वी से उठने वाली हानिकारक किरणें दोबारा पृथ्वी पर आ जाती है जिससे तापमान में वृद्धि होती है जिसका प्रभाव मौसमी असंतुलन के रूप में मिलता है। ग्रीन हाउस गैसों से निपटारा पाना सिर्फ भारतवर्ष ही नहीं बल्कि पूरे विश्व के लिये चुनौती है। ग्रीन हाउस गैसों के उत्पादन पर भारत विश्व के चौथे स्थान पर है। वातावरण में कार्बन (सी) तथा नत्रजन (एन) अनुपात (सी:एन) का चारा उत्पादन में महत्वपूर्ण स्थान है। बदलते जलवायु परिवेश में सी:एन अनुपात में असंतुलन की संभावना बढ़ जाती है जिससे चारा उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण के नाम पर पेड़ों की अंधाधुंध कटाई, पहाड़ों का कटाव, समुद्री सुनामी व वर्षा चक्र में बदलाव पर्यावरण असंतुलन को बढ़ावा देकर जलवायु को अनियमित कर रहे है। इसके चलते

तापमान में वृद्धि, अधिक वाष्पीकरण के कारण जल स्तर में उत्तरोत्तर कमी के कारण वायुमंडल में कार्बन डाई आक्साइड (सीओ2) उत्सर्जन व अवशोषित करने का समीकरण असंतुलित हो गया है। इन सभी का एक मात्र समाधान चारा वृक्षारोपण, जलागम प्रबंधन व जैविक खेती जैसे कृषि प्रणाली को प्रोत्साहन देना है।

शुष्क खेती का विकास

पिछले कुछ वर्षों से जलवायु परिवर्तन का स्पष्ट प्रभाव कम बारिश के रूप में देखा जा रहा है। तालाब इत्यादि तक नहीं भर पा रहे है। चारे की कमी से पशु खाद्यान्न असुरक्षा के रूप में सामने दिख रहा है। चारा अनुसंधान की दिशा में अब कम पानी की मांग वाली चारा फसलों का विकास होना चाहिए जिसमें जायदा सिंचाई की जरूरत न हो।

शुष्क चारा उत्पादन हेतु प्रमुख फसलें

ज्वार: (एम.पी.चरी, यू.पी.चरी-1, यू.पी.चरी-2, पूसा चरी-6, पूसा चरी-9, पूसा चरी-33, राजस्थान चरी-142, हरियाणा चरी-136, जवाहर चरी-69 इत्यादि) इनमें 30 से 45 टन प्रति हे. हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है।

बाजरा : कम बारिश में पैदा होने वाली प्रमुख गैर दलहनी चारा फसल है जिनमें जायन्ट बाजरा, राज बाजरा इत्यादि प्रजातियां प्रमुख हैं। इनसे 75-90 टन/ हे. हरा चारा प्राप्त हो सकता है।

ग्वार : यह प्रमुख दलहनी फसल है जिनमें बुन्देल ग्वार-1, एस.एस.277, एस.एस.जी.-119 प्रमुख प्रजातियां है। । 18 से 35 टन/ हे. हरा चारा प्राप्त हो सकता है।

सेम : सेम की बुन्देल सेम-1, जे.एल.पी-4, प्रजातियों से 15-35 टन/ हे. दलहनी पौष्टिक हरा चारा प्राप्त होता है।

लोबिया: (बुन्देल-1,बुन्देल-2, यू.पी.सी. 9202 प्रजातियां) से 30-35 टन/हे. की दर से हरा दलहनी चारा प्राप्त होता है।

स्टाइलो: (हमाटा, सिबराना व स्क्रेब्रा प्रजातियां) कम वर्षा में होने वाली अच्छी दलहनी चारा है। मक्का, ज्वार एवं बाजरा के साथ स्टाइलो हमाटा बोने से नत्रजन स्तर में सकारात्मक वृद्धि होती है।

अनियमित वर्षा वर्षा के चलते शुष्क क्षेत्रों में अन्न वाली फसलों के साथ कम अवधि वाली चारा फसलें उगाई जा सकती है। सूखा आदि कारणों से परम्परागत एकल फसल चक्र की अपेक्षा सहफसलीकरण जायदा लाभप्रद माना गया है। उदाहरणत: अरहर के साथ लोबिया, बाजरा ज्वार इत्यादि चारा फसलें उगाई जा सकती है। इसी तरह ज्वार (दाना) के साथ लोबिया (चारा) या ढेंचा के साथ ज्वार (दाना) के अन्त:फसलीकरण से 6-6.5 टन/हे.हरा चारा प्राप्त होता है। इसी प्रकार अरहर के साथ दीनानाथ घास के अन्त: फसलीकरण से 10 टन/हे. हरा चारा प्राप्त होता है।

चारा फसल प्रणाली में विविधीकरण : आज भी देश के अधिकांश भागों में एकल चारा फसल खेती पद्धति अपनायी जाती है। इस पद्धति में बदलते जलवायु से प्राकृतिक आपदा अथवा बीमारियों के उपरान्त होने वाली हानि की सम्भावना अधिक रहती है। इस पद्धति को त्यागकर चारा आधारित कृषि तथा उत्पादों में विविधीकरण जैसे कृषि वानिकी, हार्टीपाश्चर, वन चरागाह इत्यादि नई तकनीकों को अपनाकर बदलते जलवायु से उत्पन्न चारा उत्पादन में हानि की भरपायी की जा सकती है।

वन चरागाह/ कृषि वानिकी/ चारा- उद्यान पद्धति अपनाएं: कृषि वानिकी पद्धति के अंतर्गत चारे की फसल के साथ बहुउद्देदशीय वृक्षों को लगाकर चारे की कमी की पूर्ति की जा सकती है। इजरायली बबूल एवं सुबबूल चारा वृक्षों के साथ अंजन तथा धामन घास, काला सिरिस एवं अंजन वृक्षों के साथ सेन व धबलू घास, देशी बबूल के साथ अंजन व केल घास तथा शीशम के साथ धबलू घास स्थापित कर हरा के साथ-साथ सूखा चारा प्राप्त की जा सकती है। पशुओं के हरे चारे के लिये बहुवर्षीय चारा वृक्ष लगाने चाहिए जो बदलते जलवायु परिवेश में भी हरा चारा प्रदान करते रहेंगे जैसे सूबबूल, सिसबेनिया, बबूल, नीम, शहतूत, पीपल, सिरस, अंजन, विलायती बबूल, पाकड़ और इजरायली बबूल आदि।

इसी प्रकार चारा उद्यान पद्धति अपनाकर आंवला, बेर करोंदा, खेजरी, बेल व नीबू जातीय वृक्षों की खेती के साथ स्टाइलो, सिराट्रो, क्लाईटोरिया इत्यादि चारा फसलें लगाकर अनियमित मौसम में भी पशुओं हेतु अल्प वर्षा में हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है।

अत: आज जब भारत सहित विश्व के अन्य देश जलवायु परिवर्तन के खतरे से वाकिफ है तो धरती के ये हरे-भरे वृक्ष हमें वैश्विक उष्मन की विभीषिका से रक्षा करेंगे। चारा वृक्षों द्वारा अनेक पारिस्थितिक सेवाओं जैसे वर्षा को आकर्षित करना, बाढ़ नियंत्रण, मृदा अपरदन की रोकथाम एवं मृदा संरक्षण, जैव विविधता तथा बदलते जलवायु परिवर्तन से जूझने हेतु कार्बन को सोखना आदि कार्यों का भी निर्वहन किया जाता है। चारा वृक्षों से चारा पत्ती मिलने के साथ-साथ यदि हम इन पारिस्थितिक सेवाओं को भी मूल्यांकन का मापदंड बनाए तो चारा वृक्षों की महत्ता और भी बढ़ जाती है। चारा वृक्ष की पत्तियों द्वारा पशु प्रोटीन व खनिज लवण के अतिरिक्त इन वृक्षों द्वारा भूमि सुरक्षा तथा वायुमंडल शुद्धिकरण के रूप में भी लाभ मिलता है। उदाहरणत: पीपल के पत्ते रोमन्थी पशु विशेषत: बकरी बड़े चाव से खाती है तथा एक पीपल का वयस्क वृक्ष 1700 किलोग्राम प्रति घंटा आक्सीजन (02) गैस बनाता है तथा 2250 कि.ग्रा. प्रति घंटा कार्बन डाईआक्साइड (सीओ 2) का अवशोषण करता है। हम ऐसे चारा वृक्ष प्रजातियों को चुनाव करें जो वायु प्रदूषण तथा अधिक तापमान सहन कर सके एवं जल की आवश्यकता अपेक्षाकृत कम हो। चारा वृक्षों के साथ-साथ वन संपदा की विविधता और प्रचुरता ही पर्यावरणीय संतुलन का मूल आधार है जो बदलते जलवायु से उत्पन्न समस्याओं का समाधान करने में सक्षम हो।

बदलते जलवायु परिवेश में टिकाऊ चारा उत्पादन हेतु प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण

जलागम प्रबंधन: लगातार बदलते जलवायु परिस्थितियां किसानों को हर बार इन्द्र देवता की मेहरबानी का इंतजार करना पड़ता है। हमारा देश वर्षा की अनियमितता, अनिश्चिता व असमानता का शिकार है। कभी बाढ़ तो कभी सूखा जिससे चारा उत्पादन प्रभावित होता है। अत: प्राकृतिक

संसाधनों का समुचित उपयोग एवं उनका प्रबंधन चारा उत्पादकता में निरन्तरता को टिकाऊ बनाये रखने के लिये अति आवश्यक है। वर्षा भी हमारे देश में अनिश्चितता इतनी ज्यादा है कि कभी तो निरन्तर वर्षा होती रहती है और कभी तो लम्बे समय तक बारिश नहीं होती। आज देश के कई भागों में जलवायु परिवर्तन से बाढ़, सूखा, सिंचाई जल में कमी व जलस्तर में गिरावट जैसी समाचार आम है। भूमिगत जल पर अधिक निर्भरता के कारण अब उसका खनन होने लगा है। अत: वर्षा जल को संग्रहित कर उसे लम्बे समय तक चारा उत्पादन व अन्य कृषि उत्पादन पर उपयोग किया जा सकता है। खेत का पानी खेत में गांव का पानी गांव में एक आदर्श मूलमंत्र है। किसान तालाब, पोखरा, जलागम बनाकर बरसाती जल संरक्षित कर सकते हैं। बदलते जलवायु परिवेश में जलागम प्रबंधन (वाटरशेड मेनेजमेंट) हरा चारा उत्पादन हेतु एक बहुआयामी विकल्प है।

उपसंहार: पशुपालन मुख्यत: चारा पर निर्भर है और चारा उत्पादन मानसून के अनिश्चित मिजाज पर। यह एक अजीब बिडम्बना है जिसका कोई स्थाई उपाय अब तक सम्भव नहीं हो पाया है। नतीजनन अतिवृष्टि, बाढ़, असामयिक वर्षा, सूखा व अकाल चारा उत्पादन को प्रभावित करते जा रहे हैं। प्रदूषण को थामना पर्यावरण संरक्षण के लिहाज से विश्व के जलवायु परिवर्तन के मुख्य एजेण्डे में शामिल है। 1972 में स्टॉकहोम सम्मेलन (पृथ्वी सम्मेलन) 1979 में जिनेवा में सम्पन्न हुए प्रथम जलवायु सम्मेलन, 1972 रियेडि जेनेरियों में हुए पृथ्वी सम्मेलन, 1997 में क्योटो सम्मेलन से लेकर हाल में 2009 में कोपनहेगन में आयोजित ग्लोबल वार्मिंग सम्मेलनों की यही आवाज थी कि किसी तरह प्रदूषण को फैलाने पर अंकुश लगाई जाए तथा वातावरण को हरा भरा बनाने की प्रयासों में तेजी लाई जाए। अत: जलवायु परिवर्तन के खतरों से निपटने के लिये चारा फसलों की ऐसी किस्मों का ईजाद हो जो अधिक गर्मी या कम बारिश में अधिक उत्पादन दे सकें। चारा-वन क्षेत्रों का विकास हो व जल का संरक्षण हो।

❑

हे पृथ्वी! सभी प्राणी तुमसे ही उत्पन्न होकर तुम पर ही विचरण करते हैं। दोपाये और चौपाये सभी का तुम भरण पोषण करती हो। हे पृथ्वी! सभी जीव तुम्हारे ही बनाये हुए हैं। वे मरणशील हैं किन्तु प्रतिदिन उगा हुआ सूर्य अपनी रश्मियों से उन्हें अमृतत्व प्रदान करते हैं।

– (अथर्ववेद 12/1/15)

बदलते जलवायु परिवेश में चारा उत्पादन : समस्यायें एवं समाधान

रवीन्द्र सिंह चौहान

हमने प्राकृतिक संसाधनों का इतना दुरुपयोग किया है कि ग्रीन हाउस प्रभाव, प्रदूषण आदि जैसी पर्यावरण संबंधी अनेक समस्यायें हमारे सामने पैदा हो गई हैं। आज हमारे देश के महान वैज्ञानिकों को कृषि के क्षेत्र से जुड़ी आने वाली चुनौतियों का पूरा अंदेशा है। इसीलिए उन्होंने अपनी बात को आगे बढ़ाते हुये कहा कि बदलती जलवायु नष्ट होते भू-संसाधन तथा तबाह होते प्राकृतिक संसाधन हमारी कृषि के लिए चुनौती बन कर खड़े हो गये हैं। यदि हम अब भी इस ओर ध्यान नहीं देंगे तो वक्त हमारे हाथ से निकल जायेगा। आज जब धरती निरंतर तप रही है, जनसंख्या बेलगाम बढ़ रही है ऐसे में भू-संसाधनों पर होती चोट कुल मिलाकर कृषि को चौपट करती है।

इसमें दो राय नहीं है कि हमारे देश में हर प्रकार की जलवायु है। कितनी ही तरह की मिट्टी है और मौसम तो जैसे फसलों को जरूरत को ध्यान में रखकर बना है। इतना ही नहीं व्यापक जैव विविधता हमारे देश में है। अगर हम इन सबका सदुपयोग करके कृषि में नये अध्याय जोड़े तो यह तय है कि हम कृषि के क्षेत्र में और भी आगे जा सकते हैं। और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी साख बना सकते हैं। ऐसा नहीं कि इस ओर ध्यान नहीं दिया जा रहा है, लेकिन अपने उपलब्ध संसाधनों का अनुकूलतम प्रयोग करना भी आवश्यक है। हालांकि हरित क्रांति वाले क्षेत्रों में प्रगति देखने में आई लेकिन बारानी क्षेत्र चरागाह क्षेत्र और चारे के हरे भरे मरुस्थलों पर्वतीय क्षेत्रों तटवर्ती क्षेत्रों आदि में चारा उत्पादन समस्या पर बदलती जलवायु का दुष्परिणाम देखने को मिला है।

बदलती जलवायु से चारा उत्पादन पर दुष्परिणाम

अ. हमारे देश में हरे तथा सूखे चारे एवं दाने का मात्रा में क्रमश: 36 एवं 44 प्रतिशत की कमी है। जिसके कारण पशुओं का सुचारू ढंग से पोषण नहीं हो पाता है। भयंकर सूखे की स्थिति में तो चारे की समस्या भयंकर भयानक रूप धारण कर लेती है। क्योंकि ऐसे समय में पहले तो चारा ही नहीं मिलता और जो सीमित सूखा चारा उपलब्ध कराया जाता है। उसमें पौष्टिक तत्वों की मात्रा में अत्यन्त कमी होने के कारण पशु कुपोषण के शिकार हो जाते हैं तथा दम तोड़ देते हैं।

ब. सूखा: प्रतिकूल पारिस्थितिक तन्त्र अत्यधिक तापमान और वर्षा का न होना भी गर्मियों के दिनों में अकाल के मुख्य कारक है। यों तो अकाल की छाया सम्पूर्ण वनस्पति को तबाह कर डालती है मगर पशुधन और यहां तक की स्वयं मनुष्य भी अछूते नहीं रहते हैं अकाल के दौरान सर्वाधिक चारे की समस्या से पशुधन ही प्रभावित होता है। क्योंकि ऐसी विकट स्थिति में पशुओं के लिए चारा और दाना उपलब्ध कराना काफी कठिन हो जाता है।

स. भूक्षरण : आंधी, तूफान तथा तेज हवाओं से किस प्रकार भूक्षरण का प्रभाव चारा फसलों पर पड़ता है। परन्तु जो भूक्षरण से पोषक तत्वों की हानि होती है वह उसकी पूर्ति नहीं कर पाता जिसके कारण चारा उपज में कमी आती रहती है। यदि कृषक जीवांश पदार्थ हरी खाद उर्वरक देकर तथा थोड़ी सी सजगता वरते तो खेती बांझ होने से बचाई जा सकती है।

द. अत्यधिक वर्षा : जहां वर्षा अधिक होती है वहां जल के वहाव के साथ भूमि की पर्त और धीरे धीरे बहती रहती है यह सतत् प्रक्रिया इतनी धीमी गति से होती है कि इसका आभास किसानों को नहीं हो पाता है। किसान प्रतिवर्ष भूमि में गोबर की खाद, जीवांश पदार्थ हरी खाद व उर्वरक देकर इस क्षति की पूर्ति करता है।

भूमि में पानी संचय रखने की क्षमता में कमी पाई जाती है। यदि ऊपर की मिट्टी कट कर वह जाती है तो उसका पौधों की वृद्धि पर असर पड़ता है। और चारे की उपज कम हो जाती है।

बदलती जलवायु में चारे की समस्या का समाधान

प्रकृति और मनुष्य में गहरा संबंध है। प्रकृति ने सदैव से मानव का साथ दिया है और बोझ भी वहन किया है। मनुष्य अपने भौतिक सुख और लाभ के कारण यदा कदा निरंतर मां की तरह सेवा करने वाली प्रकृति की काया को छलनी करता रहता है। जिसके दुष्परिणाम स्वरूप प्रकृति का संतुलन बिगड़ गया है हाल का गुजरात भूकम्प इसी का एक उदाहरण है।

भूमि की उर्वराशक्ति में वृद्धि

प्रयोगों द्वारा अनुमान लगाया गया है कि प्रतिवर्ष हमारे देश में 600 करोड़ टन मिट्टी पृथ्वी की उपरी सतह से वर्षा के तीव्र बहाव से तथा तेज हवा से कट कर बह जाती है जिससे ऊपरी सतह में मौजूद जीवांश तथा पोषण तत्वों की मात्रा हर एक साल घटती जाती है। बहुत से वृक्ष जैसे बबूल खेजरी इजरायली बबूल विलायती बबूल शीशम सिरिस आदि की जड़ पद्धति गहरी और फैलने वाली होने के कारण ये मृदा के कणों को आपस में बांधे रखती है।

विभिन्न अनुसंधानों द्वारा यह साबित हो चुका है कि सुबबूल दलहन परिवार के होने के नाते संसार के बहुत से भाग में इसका बहुउद्देशीय रूप से उपयोग किया जाता है। हिमाचल के ढाल पर भी उगाया जा सकता है। सूखाग्रस्त क्षेत्रों में जहां पानी की कमी है और भूमि जहां अनुउपजाऊ है वहां भी आसानी से इसे उगाया जाता है।

भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी के वैज्ञानिक द्वारा शोध करके यह साबित

कर दिया है कि बदलते जलवायु परिवेश में भी यह सुबबूल पशुधन के लिए वरदान साबित हो रहा है।

1. इसको ऊंची पहाड़ियों पर भी उगाया जा सकता है।
2. नम भूमि के साथ साथ प्रकाश की काफी मात्रा में इसकी पैदावार में वृद्धि होती है।
3. अधिक नमी,अनुपयुक्त जल निकास, क्षारीय भूमि,अधिक शुष्क परिस्थितियों में भी उगाया जाता है।
4. शीघ्रता से गांठें निकलने से पौधों में वृद्धि तेजी से होती है।

अप्रचलित (गैर पारम्पारिक) चारे का उपयोग

अकाल की स्थिति में इन वृक्षों की हरी पत्तियों को पशु आहार में 50 प्रतिशत तक मिलाकर खिलाया जा सकता है। साधारणतया पशुओं को फसलों के अवशेष एवं अन्य उद्योगों से बचे अवशेष पदार्थ थोड़ी मात्रा में मिलाकर खिलाया जाता है। जब अकाल की समस्या अधिक गम्भीर हो जाती है, कुछ वृक्ष जैसे अरडू, पीपल, पांकर बबूल झरबेरी, कचनार, शीशम, काला सिरिस बेर खेजड़ी, नीम ठाक बरगद आदि की हरी पत्तियां आदि खिलाई जाती है। इन पत्तियों से प्रारम्भिक अवस्था में कच्ची प्रोटीन की मात्रा काफी अधिक होती है। और कच्चे रेशे भी बाढ़ की अवस्था में होते हैं। इन वृक्षों की पत्तियां में कैल्शियम अधिक होता है। तथा इनके खाने से पशुओं के स्वास्थ्य में प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता। पश्चिमी राजस्थान में पाई जाने वाली वनस्पतियां फोग बुई बेकरिया, गोखुरू आदि भी चारे के साथ अकाल में चारे के साथ मिलाकर पशु आहार के रूप में दिये जाते है।

कृषि आधारित उद्योगों से प्राप्त उत्पाद

देश में कृषि पर आधारित उद्योगों से विभिन्न प्रकार की खलियां बीज व टुकड़े आदि प्राप्त होते हैं। जिनका पशु आहार के रूप में सरलता से उपयोग किया जा सकता है महुआ, कुसुम कंरज नीम अरंडी अलसी साटा, सूरजमुखी इत्यादि की खिलिया प्राप्त हो जाती है। इनका उपयोग बड़े पशुओं में कम किया जाता है किन्तु छोटे पशु जैसे भेड़ बकरी आदि को आहार के रूप में देते हैं। तैलीय बीजों की खली के अलावा बबूल के बीज, सुबबूल के बीज पनवार की बीज जूली फलोरा सालके बीजों का चूर्ण गन्ने की खोई इत्यादि का भी पशु आहार के रूप में देते हैं।

मिश्रित चारा उगाना

चारे की फसलों में यदि दो दाल वाली फसलों को मिलाकर बोया जाय तो यह चारा बहुत ही पौष्टिक एवं स्वादिष्ट होता है।

मिश्रित फसल

1. ज्वार+लोबिया
2. मकका+लोबिया
3. बाजरा+लोबिया
4. बरसीम+जापान सरसों
5. बरसीम+जई

बदलते जलवायु परिवेश में सुबबूल व चारा की मिश्रित खेती

फसलों के तेज गर्मी तथा सूखी तेज हवा से बचाने के लिए फसलों के बीच में सुबबूल की लाइनें 3-4 मीटर के अंतराल पर लगाने से वर्षभर चारे की उपलब्धता के साथ ही फसलों के उत्पादन में वृद्धि 19.63 प्रतिशत तक पाई गई है। इस प्रकार के प्रयोग उन प्रयोगों में जहां तेज हवा का प्रकोप हो। सफलता पूर्व किये जा सकते है और चारे तथा अनाज के उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है।

संस्थान द्वारा विकसित तकनीक के प्रयोग से देश में अन्य स्थानों पर भी प्रयोग किये गये है। और पाया गया है कि सुबबूल की अच्छी प्रजातियों के साथ ही संकर नेपियर तथा सुबबूल का औसत प्रतिवर्ष उत्पादन 1272 कुंतल प्रति हेक्टेयर तक मिल सकता है। इसी प्रकार ज्वार तथा सूडान घास के साथ उत्पादन 1288 तथा 1327 कुंतल प्रति हेक्टेयर प्रतिवर्ष मिलता रहता है। इस तरह के प्रयोग उत्पादन की दृष्टि से सफल रहे हैं। साथ ही भूमि की उर्वरता में भी वृद्धि दर्शाते हैं। यदि बाजरे तथा जई की फसल ली जाए तो उत्पादन 100 से 154 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता है। इसका प्रयोग नाइट्रोजन की समान मात्रा पर भी फसल के उत्पादन में 10 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाता है।

विभिन्न क्षेत्रों में उपयुक्त फसल चक्रों की उत्पादन क्षमता

उत्तरी क्षेत्र-पालमपुर (हि.प्र.) समशीतोष्ण नम लाल भूमि हरा चारा उत्पादन	कुंतल प्रति हेक्टेयर
1. नेपियर बाजरी हाईब्रिड+वेलनेटवीन -बरसीम+सरसों	1226
2. मक्का+लोबिया-ज्वार-दोरई जई	844
तराई क्षेत्र (उ.प्र.) लाल एवं पीली भूमि	
1. मक्का+लोबिया	1767
2. नेपियर बाजरा हाईब्रिड+बरसीम लोबिया	1208
हिसार अर्द्धशुष्क बलुई भूमि	
1. नेपियर बाजरा-हाइब्रिड बरसीम	2117
2. नेपियर बाजरा हाईब्रिड+लूसर्न	1760
मध्य पश्चिमी क्षेत्र अर्द्धशुष्क लाल भूमि झांसी (उ.प्र.)	
1. नेपियर बाजरा हाईब्रिड+लोबिया सनई-बरसीम	1761
2. लोबिया बाजरा+लोबिया बरसीम	1760
पूर्वी क्षेत्र (बिहार) मध्यम नम लाल अम्लीय भूमि	
1. बाजरा+लोबिया-मक्का+लोबिया जई	1026
2. मक्का लोबिया ज्वार+लोबिया बरसीम +सरसों	960

दीनानाथ घास की नई किस्म इगफ्री एस 3808

इस घास को दीनानाथ, दीनबन्धु आदि नामों से पुकारा जाता है। क्योंकि यह ऐसे गरीब किसानों की साथी है जो बदलते जलवायु परिवेश में भी अधिक खाद पानी का प्रबंध करने में असमर्थ है। इसके अलावा कम उपजाऊ भूमि में भी कम देख भाल के बावजूद हर प्रकार की भूमि में उगाई जा सकती है। यह रसीली स्वादिष्ट और पाचनशील होती है। हरे चारे में प्रोटीन भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है दीनानाथ घास हरे चारे के लिए ग्वार और बाजरा के स्थान पर उगाई जा सकती है। अधिक बरसात होने पर बरसात के दिनों में उगाकर हरा चारा चारा उपभोग से ज्यादा होने पर हे बना कर चारा की कमी के समय इस्तेमाल किया जा सकता है। दीनानाथ घास देश में मुख्यत: पश्चिमी बंगाल, मध्य प्रदेश और तमिलनाडु में उगाई जाती है।

जलवायु तथा भूमि

इसे आर्द्र-शुष्क से लेकर आर्द्रतर जलवायु वाले क्षेत्रों में भी उगाया जा सकता है। जिन भागों

में वर्षा 800 मिलीमीटर से 1250 मी. तक होती है। इसे वहां भी उगाया जा सकता है गर्म जलवायु वाला क्षेत्र जहां बरसात कम हो भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी में दीनानाथ घास पर 10 वर्षों से शोध कार्य करने से और अन्वेषणों द्वारा पता चला है कि दीनानाथ घास बदलते जलवायु परिवेश में चारे की समस्या का सर्वश्रेष्ठ समाधान है।

क. दीनानाथ घास से कम समय में चारा प्राप्त होता है।

ख. ज्वार बाजरा की अपेक्षा लगभग दुगुनी चारे की फसल देता है।

ग. चारा रसदार स्वादिष्ट होता है जिसे सभी पशु चाव से खाते हैं।

घ. दलहनी चारे-जैसे ग्वार, लोबिया, मखमली सेम के साथ इसे मिश्रित फसल के रूप में बड़ी सुगमता से उगाया जा सकता है।

य. यह घास को उर्वराशक्ति को बढ़ाता है।

ड. यह घास बरसात में भूमि के कटाव को रोकने में सहायक होती है।

ज. कम उपजाऊ भूमि में अधिक चारे की पैदावार देने की क्षमता रखती है।

झ. यह चारे के अभाव में (अक्टूबर-नवम्बर) में हरा चारा प्रदान करती है।

स. यह सूखा पड़ने (अकाल) के दिनों में भी उगाई जा सकती है।

ट. यह घास अधिक बरसात के मौसम में भी अच्छी पैदावार देती है।

उ. भूक्षरण रोकने में सहायक सिद्ध होती है। ❑

इतने बड़े देश में जहां इतनी भाषाएं हैं वहां देश की एकता के लिए एक कड़ी की आवश्यकता है। कोई भाषा ऐसी हो, जिसे सब बोल सकें, जो एक कड़ी की तरह सबको मिलाजुला कर रख सके। इसलिए हिन्दी को बढ़ावा देना सबका काम है।

– श्रीमती इंदिरा गांधी

गिरती मृदा उत्पादकता- चिंता नहीं उपाय करें

शेषमणि मिश्र

देश में बढ़ती खाद्यान्न आवश्यकता उतनी चिंता का विषय नहीं है जितनी की मृदा की दिनों दिन घटती उत्पादकता/मृदा की धड़कन कही जाने वाली कार्बनिक कार्बन के गिरते स्तर का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय में 1962 में कार्बनिक कार्बन का स्तर तीन प्रतिशत से ऊपर था जो 1980 तक डेढ़ प्रतिशत तक आ गया। अठारह वर्षों में लगभग आधी गिरावट। जैसे जैसे किसी परती पड़ी जमीन में खेती प्रारम्भ की जाती है, वैसे वैसे उसके पोषक तत्वों के स्तर में कमी आती जाती है। आगे भी क्यों न आमदनी अठन्नी खर्चा रुपैया वाला हाल जो है। मृदा में से पौधों के पोषण के लिए पोषक तत्व तो निकलते जा रहे हैं परन्तु पोषक तत्वों का भंडार कहे जाने वाले पौध अवशेषों, गोबर की खाद तथा हरी खादों का प्रयोग गिरता जो जा र हा है। रासायनिक खादों के प्रयोग से मृदा में तत्वों को अपने समाहित करने वाले कार्बनिक पदार्थ की कमी जो आती जा रही है।

सारणी-1 में दिये गये मृदा उर्वरता के आंकड़ों पर यदि नजर डालें तो कार्बन, नत्रजन तथा फास्फोरस के लिहाज से भारत की अधिकांश मृदायें निम्न स्तर में ही आयेंगी। कुछ क्षेत्रों में पोटैशियम की उपलब्धता पौधों के लिए अभी पर्याप्त हो सकती है पर कितने दिनों तक ?

भारत में दिन प्रतिदिन घटती खाद्यान्न उपलब्धता (सारणी-2) के लिए बढ़ती जनसंख्या के अतिरिक्त मृदा की घटती उत्पादन क्षमता भी जिम्मेदार है। वर्ष 1951 में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन दालों की उपलब्धता 60.7 ग्रा. थी जो क्रमश: घटते-घटते 2007 तक 29.4 ग्राम के निम्न स्तर पर पहुंच गयी।

सारणी 2. भारत में गिरती खाद्यान्न उपलब्धता

अवधि	प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न उपलब्धता
91-95 औसत	481.9 ग्राम
96-2000 औसत	469.1 ग्राम
2001-2005	446.2 ग्राम
207 अनुमानित	439.3 ग्राम

सारणी 3. भारत तथा चीन में उत्पादन स्तर कि.ग्रा./हे.

	भारत	चीन
धान	3124	6265
गेहूं	2619	4455
मक्का	1938	5365
मूंगफली	859	3318
गन्ना	66945	82528

सारणी 1. मृदा उर्वरता स्तर माप का पैमाना

पोषक तत्व	मृदा उर्वरता स्तर		
	निम्न	मध्यम	उच्च
जैविक कार्बन (च)	0.5 से कम	05-0.75	0.75 से अधिक
प्राप्य नत्रजन (कि.ग्रा./हे.)	280 से कम	280-560	560 से अधिक
प्राप्य फास्फोरस (कि.ग्रा./हे.)	10 से कम	10-24	24 से अधिक
प्राप्य पौटेशियम (कि.ग्रा./हे.)	108 से कम	108-280	280 से अधिक

ये तुलनात्मक आंकड़े भारत में फसलों की उत्पादकता वृद्धि की संभावना की ओर स्पष्ट रूप से इंगित करते हैं। कृषि उत्पादकता में यह ठहराव मुख्य रूप से भूमि की गिरती उर्वराशक्ति के कारण ही आया है।

सत्तर के दशक में प्रति कि.ग्रा. नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटैशियम के प्रयोग से खाद्यान्न उत्पादन में होने वाली वृद्धि 16 कि.ग्रा. थी, जो कि 80 के दशक में घटकर 12 कि.ग्रा., 90 के दशक में 8 कि.ग्रा. और योजना आयोग के आंकड़ों के अनुसार अब यह 6-7 कि.ग्रा. हो गया है जो निश्चित ही हम सब लोगों के लिए चिंता का विषय है। यदि हम किसानों को भूमि की उर्वराशक्ति में निरंतर हो रहे बदलाव के अनुसार पोषक तत्व प्रबंधन की सही जानकारी न दे पाये और उन्हें इन निवेशों की सही मात्रा और सही समय के बारे में जानकारी देने का प्रयास न किया गया तो खेत, खेती, खलिहान और किसान की चिंताजनक स्थिति बनी रहेगी।

आज किसान अपने बीते कल की तुलना में अधिक परेशान महसूस कर रहा है। मिट्टी की घटती ताकत, उत्पादकता में ठहराव, खेती का बढ़ता खर्च, जलवायु परिवर्तन की कारगर तकनीक और आवश्यक निवेशों की उचित जानकारी का अभाव, चोर बाजारी के साथ ही निवेशों की संदिग्ध गुणवत्ता, महंगाई के बावजूद उत्पाद की सस्ते मूल्य पर बिक्री की लाचारी, बिजली की आंख मिचोली आदि से किसान को नींद हराम हो गयी।

कृषि विकास से जुड़े सभी जनों और संस्थाओं का कर्तव्य बनता है कि किसान की कठिनाइयों को हल करने के लिए ऐसी पहल करें ताकि मिट्टी की खोयी शक्ति पुन: लौटे, उत्पादकता वृद्धि दर में आयी गिरावट कम हो और किसान अधिकतम लाभकारी उपज का लक्ष्य हासिल कर सुखी समृद्ध, और खुशहाल बन सकें।

कुछ उपाय

- मृदा जीर्णोद्धार हेतु वर्मी कम्पोस्ट को बढ़ावा देने के लिए वृहद कार्यक्रम प्रारम्भ करने की आवश्यता ।
- कृषकों को प्रशिक्षण दिया जाए तथा सूक्ष्म प्रजाति के केंचुए उपलब्ध कराकर कुछ गांवों में वर्मी कम्पोस्ट तैयार करने का सघन एवं सफल विधि देने का प्रयास किया जाए।
- मृदा की उर्वराशक्ति बढ़ाने के आशय से दलहनी फसलों को क्षेत्रफल बढ़ाने हेतु विशेष प्रयास किया जाए।
- कृषकों के विभिन्न कार्यक्रम जैसे संगोष्ठी, प्रशिक्षण, समूह बैठक, क्षेत्र दिवस, फसल विचार गोष्ठी और भ्रमण कार्यक्रम आयोजित किये जाएं।
- फसलों की अधिक उपज देने वाली उन्नत प्रजातियों/संकर बीजों का बड़े पैमाने पर वितरण किया जाए।
- उर्वरकों की कमी की विराट समस्या से निजात पाने के लिए गांव के कृषकों को उर्वरकों की आवश्यक आपूर्ति उनके दरवाजे पर सुनिश्चित करने का प्रयत्न किया जाए।
- भू-जल संवर्धन हेतु तालाब विकसित किये जाएं। गांव का पानी गांव में को एक अभियान के रूप में लिया जाए।
- कम उर्जा का उपयोग करने वाली (दलहन और तिलहन) को फसल चक्र में अधिक प्राथमिकता दें।
- फसल अवशेषों का खेती में उचित उपयोग तथा न्यूनतम जुताई अपनाएं।
- उपलब्ध सभी जैविक, अवशेषों का अपघटन करके उनका पुन: चक्रीकरण करना न भूलें।
- जैविक एवं यांत्रिक विधियों द्वारा खरपतवार एवं कीट नियंत्रण को प्राथमिकता दें।

हरी खादें

हरी खाद की पलटाई फसल की एक विशेष अवस्था पर करने से ही मृदा को सबसे अधिक नत्रजन तथा जीवांश पदार्थ प्राप्त होते हैं। ग्रीष्म कालीन हरी खाद की फसल को 45-50 दिन में धान की रोपाई के पूर्व ही खेत में पलट देना चाहिए। मिट्टी में मिलाने का ठीक समय वह है जब कि फसल कुछ परिपक्व हो और उसमें फूल भी न निकलना प्रारम्भ हुए हों तथा उसकी शाखायें, पत्तियां तथा तने कोमल एवं रसदार हों। इस अवस्था में फसल में रसयुक्त कार्बनिक पदार्थों की मात्रा सबसे अधिक होती है तथा कार्बन/नत्रजन अनुपात भी समुचित रहता है। ऐसी अवस्था में हरी खाद की फसल को मिट्टी में पलटने से विघटन शीघ्रता से होता है। इसमें नत्रजन तथा पौधों के अन्य पोषक तत्व ऐसे स्वरूप में रहते हैं, जिसे फसलें सुगमता से लेकर अधिक लाभ उठा सकती है।

हरी खाद की खूबियां

- फसल खूब बढ़ने वाली, पत्तियों वाली तथा शाखादार हों, जिससे खेत को प्रति हेक्टर अधिक से अधिक मात्रा में कार्बनिक पदार्थ मिल सकें।
- फसल दलहनी होनी चाहिए क्योंकि उसमें पौधों की जड़ों में ग्रथियां होती हैं जिसमें पाये जाने वाले जीवाणु वायुमण्डल की गैसीय नत्रजन को मृदा में स्थिर करते हैं।
- इसका बीज सस्ता हो और आसानी से उपलब्ध हो सके।
- फसलों की जड़े गहरी जायें जिससे मिट्टी भुरभुरी बन सके और पोषक तत्वों को अधोमृदा से ग्रहण करके ऊपरी स्तर में लाये।
- हरी खाद ऐसी हो जिससे कम उपजाऊ मृदा पर भी सफलतापूर्वक उगाया जा सके तथा जल की आवश्यकता भी कम हो।
- फसल में वृद्धि की दर तीव्र हो और अधिक देखरेख की आवश्यकता भी न पड़े।
- मिट्टी के फसल उपयोगी अवशेषों को कम्पोस्ट बनाने में उपयोग करते रहना चाहिए।

कुछ वैज्ञानिक तथ्य व सलाह

- मृदा प्रकृति की धरोहर है एवं पर्यावरण का अभिन्न अंग है। फसलीय पौधों के पोषण से मृदा का पोषण अधिक आवश्यक है।
- पौधों को सोलह पोषक तत्वों यथा- आक्सीजन, हाइड्रोजन, नत्रजन, फास्फोरस, पोटैशियम, कैल्शियम,मैग्नीशियम, गंधक, लोहा, तांबा, बोरान, मैगनीज, क्लोरीन, जस्ता, कोबाल्ट एवं मालीब्डनम की आवश्यकता होती है।
- लगभग 85 प्रतिशत नत्रजन, 50-55 प्रतिशत फास्फोरस एवं 90 प्रतिशत गंधक मृदा में उपस्थित कार्बनिक पदार्थ से जुड़ा रहता है। इसीलिए कार्बनिक पदार्थ को पोषक तत्वों का भंडार कहा जाता है।
- सभी प्रकार के पौधों की अच्छी वृद्धि एवं सफल प्रजनन काल के लिए मुख्यत: 16 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। जिनमें नत्रजन तथा फास्फोरस की मृदाओं में अधिक कमी पायी जाती है। पोटाश को कुछ खास फसलों जैसे आलू, मक्का, कपास आदि में अधिक मात्रा में उपयोग करती हैं।
- इनमे से आक्सीजन तथा हाइड्रोजन वायु मंडल से प्राप्त हो जाते हैं कुछ की आवश्यकता अधिकांश परिस्थितियों में मृदा से पूरी हो जाती है जैसे कैल्शियम तथा मैग्नीशियम तथा गंधक।
- अन्य पोषक तत्वों की आवश्यकता सूक्ष्म मात्रा में होती है तथा इनमें से कुछ की कमी जैसे जस्ता, धान, गेहूं आदि फसलों में पाई जाने लगी है।
- बोरान की आवश्यकता नीबू वंश के पेड़ में फूल तथा फल को गिरने से रोकता है।
- कैल्शियम की अधिक मात्रा मिट्टी के स्वास्थ्य के लिए बहुत अच्छी होती है परन्तु मृदा के विनिमेय धरातल पर पन्द्रह प्रतिशत से अधिक सोडियम की मात्रा मृदा को बीमार बना देती है।
- सोडियम की अधिकता से ही क्षारीय (ऊसर) मृदाओं का निर्माण होता है।
- सोडियम को विनिमेय धरातल से हटाने में कैल्शियम का प्रयोग जिप्सम के माध्यम से किया जाता है।
- गेहूं के भूसे या धान के पुआल में कार्बन अधिक तथा अपेक्षतया नत्रजन कम होती है।
- अत: जब आप इन्हें खेतों में जीवांश बढ़ाने के लिए डालते हैं तो इनके साथ कुछ नत्रजन का भी प्रयोग करें।

- ऐसा न करने पर सप्ताह या दस दिन के लिए आपके खेतों में नत्रजन की कमी हो सकती है।
- मृदा में बारीक कणों की अधिकता उसके उपजाऊ का द्योतक है।
- मक्के में भुआ आते समय पोटैशियम के प्रयोग से आपका भुट्टा पूरी तरह दातों में भरा मिलेगा।
- आलू में पोटैशियम का प्रयोग बुवाई के समय नहीं बल्कि बुवाई के एक महीने बाद करें।
- नीबू परिवार के पौधों में यदि फूल गिर जाते हों या फिर फल आकर गिर जाते हों तो फूल आते समय 0.5 ग्राम/प्रति लीटर बोरैक्स (सुहागा) के घोल का छिड़काव करें।
- फास्फोरस की खाद का प्रयोग जड़ों के पास ही करें क्योंकि यह मिट्टी में अधिक दूर नहीं चल पाता ।
- बरसात के मौसम में नत्रजन एवं पोटैशियम का प्रयोग खुला मौसम देखकर ही करें अन्यथा यह पानी के साथ बह जायेगा और आपको कोई लाभ नहीं होगा।
- आलू में पोटैशियम के प्रयोग से उसका आकार काफी बड़ा हो जायेगा और रंग चमकीला।
- धान की फसल में जब कई दिनों तक बरसात होती रहे और धान पीला पड़ने लगे और जिंक के प्रयोग के बाद भी पीलापन न जाये तो चूने और साधारण नमक का प्रयोग करें।
- पूर्वी उत्तर प्रदेश में किसानों की पहल पसंद इफको के उर्वरक ही हैं।
- यदि आपके खेतों में पोटैशियम की कमी न हो तो एन.पी.के. मिश्रण का प्रयोग न करें। ❑

जैसे तिनका हवा का रूख बताता है वैसे ही मामूली घटनाएं भी मनुष्य के हृदय की वृत्ति को बताती हैं।

– महात्मा गांधी

मानव हृदय में घृणा, लोभ और द्वेष वह विषैली घास है, जो प्रेम रूपी पौधे को नष्ट कर देती है।

– सत्य साईं बाबा

खाद के लिए पशुपालन : टिकाऊ खेती का एक माध्यम

सनत कुमार महन्ता

भारत एक कृषि प्रधान देश है। गाय तथा भैंस इत्यादि पशु हमारे कृषि पारितंत्र के महत्वपूर्ण हिस्से हैं। क्योंकि यह हमारे बहुत से कार्य करते हैं। वे फसलों के बचे हुए भाग जो मनुष्य के काम का नहीं हैं, खाकर हमारे लिए दूध तथा मांस इत्यादि प्रदान करते हैं। साथ ही अन्य कार्य जैसेकि जुताई करना, बोझा ढोना आदि कार्य भी करते हैं। इन सब कार्यों के अतिरिक्त एक महत्वपूर्ण कार्य खाद उत्पन्न करना भी है। जिससे महत्वपूर्ण पोषक तत्व वापस मृदा में मिल जाते हैं। तथा बिगड़ी हुई भुमि को टिकाऊपन प्रदान करते हैं।

हरित क्रांति के समय एक ही फसल के उत्पादन पर जोर दिया गया है। साथ ही इस बात को ध्यान में रखा गया कि फसलों को पोषक तत्व कितनी मात्रा में मिल रहा है न कि कहॉ से मिल रहा है। इससे उस समय फसलों की पैदावार तो बढ़ गई लेकिन कालांतर में मिट्टी की संरचना, पोषक चक्र भी बिगड़ गया। जिससे हमारा कृषि पारितंत्र अव्यवस्थित हो गया। अब इस कृषि पारितंत्र को सुव्यस्थित करने इसमें टिकाऊपन लाने के लिए हमें कृषि के विविधिकरण की आवश्यकता है। जिसके लिए दो तरीके बताए गए है। एक मिश्रित खेती दूसरा पशुपालन के साथ खेती करना ताकि तत्वों का मृदा से आदान प्रदान स्थायी हो सके।

गोबर की खाद

भारत में कार्बनिक खाद के रूप में गोबर की खाद का अधिकांशतय: प्रयोग होता है। क्योंकि यह आसनी से उपलब्ध है। गोबर की खाद, पशुओं को दिए जाने वाले चारे के बचे हुए भाग,पशुओं के गोबर तथा पेशाब मिले हुए कचरे (बिछावन) आदि का विघटित मिश्रण है। जब प्रतिदिन पशुओं का गोबर तथा पेशाब मिले हुए कचरे (बिछावन) आदि को लेकर विघटन के लिए किसी गड्डे में ढेर के रूप में काफी समय के लिए रखते हैं तब गोबर की खाद तैयार होती है। यह खाद किसानों तथा मालियों के लिए बहुत महत्व रखती है। इस प्रकार गोबर की खाद मिश्रित कृषि तंत्र का एक महत्वपूर्ण कृषि उप-उत्पाद है।

दुर्भाग्य से पशु गोबर का लगभग 50 प्रतिशत भाग ईंधन के रूप में प्रयोग होता है। जिससे कृषि को बहुत बड़ा नुकसान होता है। यदि मृदा उर्वरता की निगाह से देखा जाए तो पशुओं का मलमूत्र तीन मुख्य तत्वों नाईट्रोजन, फास्फोरस पोटाश तथा कार्बनिक पदार्थ की आपूर्ति के लिए महत्वपूर्ण है। एक औसतन ताजा गोबर में 0.40 प्रतिशत नाईट्रोजन, 0.20 प्रतिशत फास्फोरस और 0.10 प्रतिशत पोटाश जबकि पेशाब में 0.80 प्रतिशत नाईट्रोजन, 0.015 प्रतिशत फास्फोरस और 0.70 प्रतिशत पोटाश पाया जाता है। लेकिन ये तत्व पशुओं द्वारा उपयोग में लाए गये चारे तथा दाने से आते हैं अर्थात इन पोषक तत्वों की मात्रा पशुओं द्वारा उपयोग में लाए गये चारे तथा दाने की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। इस प्रकार से मलमूत्र की संरचना एक पशु से दुसरे पशु यहॉ तक कि एक दिन से दुसरे दिन भी भिन्न हो सकती है।

इस प्रकार से मलमूत्र में पोषक तत्वों की मात्रा निम्नलिखित कारकों पर निर्भर करती है।

- पशु की उम्र तथा वजन
- चारे तथा पानी का प्रतिदिन उपभोग
- चारे की पाचकता
- पशुओं द्वारा तत्वों के उपयोग करने की क्षमता

हमारी भारतीय गाय से (300-450 कि.ग्रा. वजन) लगभग औसतन 15 - 20 कि.ग्रा. गोबर प्रति पशु प्रति दिन प्राप्त होता है। यदि इस गोबर को उचित प्रकार से गोबर की खाद में परिवर्तित किया जाये तो भारतीय मृदा के लिए बहुत बड़ी मात्रा में नाईट्रोजन, फास्फोरस पोटाश तथा कार्बनिक पदार्थ का योगदान होगा।

गोबर की खाद की गुणवत्ता

एक अच्छी प्रकार से तैयार गोबर की खाद में औसतन 0.5-1.0 नाईट्रोजन, 0.15 -0.20 फास्फोरस तथा 0.5-0.6 प्रतिशत पोटाश पाया जाता है। इस की गुणवत्ता पर निम्नलिखित कारक प्रभाव डालते है।

पशुओं द्वारा प्रयोग में लाये गये चारे का प्रकार: यदि उपयोग किए गये चारे दाने में पोषक तत्वों की मात्रा आधिक होगी तो मलमूत्र में भी इन तत्वों की अधिकता होगी। पशु द्वारा खाए गये चारे की लगभग 50 प्रतिशत कार्बनिक पदार्थ तथा 70-80 नाईट्रोजन की मात्रा ही गोबर में आ पाती है।

पशु की उम्र तथा शारीरिक दशा

कमजोर पशु की अपेक्षा युवा तथा स्वस्थ पशु अपनी वृद्वि तथा उत्पादन के लिए अधिक पोषक तत्वो का प्रयोग करते है जिससे उनके गोबर में पोषक तत्व कम मात्रा में पाये जाते हैं।

पशु की उत्पादन कार्य क्षमता

अनुत्पादन पशु की अपेक्षा कार्य तथा उत्पादन करने वाले पशु उत्पादन के लिए अधिक पोषक तत्वों का प्रयोग करते है जिससे उनके गोबर में पोषक तत्व कम मात्रा में पाये जाते हैं।

खाद को सुरक्षित रखने की दशा

साधारण दशा में गोबर की खाद को रखने से उसमें से मौजूद नाईट्रोजन तथा पोटाश की मात्रा कम हो जाती है।

गोबर की खाद की अधिकतम उपलब्धता

भारत मे लगभग 185.18 मिलियन गोधन तथा 97.2 मिलियन भैंस हैं। यदि इन सभी के मलमूत्र का उपयोग पूरी तरह गोबर की खाद बनाने में

प्रयोग किया जाए तो एक बहुत बड़ी मात्रा में खाद तैयार होगी। एक अनुमान के अनुसार एक ए.सी.यू. (एडल्ट कैटल यूनिट) जिसका वजन 350 कि.ग्रा. है लगभग 7.0 कि.ग्रा. चारा (शुष्क पदार्थ के आधार पर) का उपयोग करता है और 20 कि.ग्रा. गोबर (ताजा) प्रतिदिन प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त जूठन और पेशाब मिला बिछावन भी लगभग 2.5 कि.ग्रा. भी प्रतिदिन प्रतिपशु पशुशाला से प्राप्त होता है। इस प्रकार कुल गाय उत्पादन 158.1 मिलियन टन ए.सी.यू में परिवर्तित होता है। यदि इस गोबर को अच्छी प्रकार से विघटित किया जाए और पूरा उपयोग मे लाया जाए तो केवल गौधन से ही भारतीय मृदा में एक बहुत बड़ी मात्रा में पोषक तत्व (3.10 मिलियन टन नाईट्रोजन, 1.02 मिलियन टन फास्फोरस तथा 2.58 मिलियन टन पोटाश) मिल सकता है (तालिका 1)। इसी प्रकार हेज् एवं सुधरबाबू, 2001 के अनुससार उपलब्ध गाय गोबर (2 बिलियन् टन प्रतिवर्ष) का भारतीय भूमि में प्रयोग होता है । पूरा उपयोग न होने और अच्छी प्रकार से सुरक्षित न रख पाने के कारण तत्वों (नाईट्रोजन) की एक बहुत बड़ी मात्रा नुकसान हो जाता है। गोबर की खाद के मुख्य तत्वों का मृदा तक नहीं पहुॅच पाने के निम्नलिखित कारण है।

- चराई कराने के कारण गोबर का एक बहुत बड़ा भाग अनुपजाऊ भूमि पर चला जाना
- गोबर का लगभग मौसम के अनुसार 30-70 प्रतिशत भाग का ईंधन के रूप में प्रयोग होना
- पशुओं के पेशाब का समुचित उपयोग न कर पाना
- अच्छी प्रकार से खाद तैयाार न कर पाना
- वर्षा में रिसकर तथा गर्मियों में उड़कर तत्वों का नुकसान

गोबर की खाद के लाभ

गोबर की खाद सभी प्रकार की मिट्टियों और फसलों में दी जा सकती है। परन्तु इसकी मात्रा मिट्टी के प्रकार, फसल वातावरण, उपलब्धता और खाद की गुणवत्ता के अनुसार भिन्न हो सकती है। अच्छी सिचाई वाले भागों (लगभग 25 टन/हैक्टर), मध्य से अधिक वर्षा वाले (लगभग 125 सेमी) भागों में 12.5 टन प्रति हे., सूखे तथा कम वर्षा वाले (लगभग 50 सेमी) भागों में 5-7 टन/हे. तथा सूखा आधारित (50 सेमी से कम) भागों में 2.5 टन/हैक्टर फसलों सन्तुष्ट वृद्वि के लिए देना चाहिए। विस्तार से इसके निम्नलिखित लाभ है।

सारणी 1. गाय के गोबर से अनुमानित अधिकतम उत्पादन एवं तत्वों का आपूर्ति

गुण	गोबर की खाद के गोबर की अधिकतम उपलब्धता	
गोबर की उपलब्धता (कि.ग्रा./ए.सी.यू./दिन)	10	20
भोजन का अवशेष एवं बिछावन (कि.ग्रा./ए.सी.यू./दिन)	2.5	2.5
खाद का उत्पादन (कि.ग्रा./ए.सी.यू./दिन)*	12.5	22.5
गायों की कुल जनसंख्या से खाद उत्पादन (मिलियन टन/वर्ष)		
ताजा गोबर के आधार पर	721.3	1298.3
शुष्क पदार्थ के आधार पर	288.5	519.3
पोषक तत्वों का उपलब्धता (मिलियन टन/वर्ष)		
नत्रजन	1.72	3.10
फास्फोरस	0.57	1.02
पोटाश	1.43	2.58
नाईट्रोजन की आवश्यकता पूरी करने के लिए आवश्यक ए.सी.यू. (संख्या /हेक्टेयर/वर्ष) **	9.17	5.09

* उपलब्ध गोबर तथा अन्य कूड़ा कचरा जो कुछ तत्वों के नुकसान/लाभ के साथ गोबर की खाद में बदला, की मात्रा दी गई है

** नाईट्रोजन की आवश्यकता 100 कि.ग्रा./हेक्टेयर/वर्ष के हिसाब दी गई है।

भूमि पर

यह सब भली-भॉति जानते हैं कि गोबर की खाद भूमि के भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुणों को सुधारती है।

भौतिक गुण

- यह मृदा की रचना, संरचना आदि को बेहतर बनाती है। जिससे जड़ों का विकास भली-भॉति हो सके।
- मिट्टी की जलधारण क्षमता को बढ़ाने के साथ फसलों को सूखे से भी बचाती है।
- मृदा क्षरण को नियंत्रित करती है।
- मृदा की उर्वराशक्ति को बढ़ाती है।

रासायनिक गृण

- मृदा में पोषक तत्वों की बढ़ोतरी।
- तत्वों (फास्फोरस) का पौधो के लिए उपलब्धता में बढ़ोतरी।
- गोबर की खाद के साथ रासायनिक खाद देने पर उसके तत्वों के उपयोग में बढ़ोतरी करना।
- पोषक तत्वों के रिसकर होने वाले नुकसान को कम करना।

भौतिक गुण

- मृदा में बहुत बड़ी मात्रा में लाभदायक जीवाणुओं का छोड़ना।
- पहले से मौजूद जीवाणओं की क्रियाशीलता में बढ़ोतरी।
- सूक्ष्म जीवाणओं द्वारा नाईट्रीटीकरण फास्फोरस को घुलनशील तथा बेहतर मृदा संरचना के पोलीसैकराइडस की उत्पादन करने की क्षमता में बढ़ोतरी।
- मृदा पर कीटनाशकों के प्रभाव को नियंत्रित करना।

फसलों पर

गोबर की खाद का प्रयोग केवल मृदा उर्वरता की ही नहीं बढ़ाता है बल्कि फसलों के लिए पोषक तत्वो की आवश्यकता को भी कम करती है। फसलों के लिए गोबर की खाद की मात्रा फसलों को नाईट्रोजन की आवश्यकता और भूमि में उपस्थित नाइट्रोजन की मात्रा पर निर्भर करती है। यह खाद सब्जियों (आलू, प्याज, गाजर, टमाटर, मूली, शलजम, गोभी, लहसुन), गन्ना, चावल, जूट, और फलवृक्ष (संतरा, केला, अंगुर, सेब, आम अमरूद्ध) इत्यादि पर दाने वाली फसलों (ज्वार, बाजरा,गेहूँ, जौ, जई), तिलहनी फसलों (मूंगफली, अलसी, नारियल), नगदी फसलों (कपास) की अपेक्षा अधिक अच्छा प्रभाव डालती है।

निष्कर्ष

बिना कृषि पारितंत्र संतुलन को ध्यान न रखते हुए जो कृषि उत्पादकता को बढ़ाने के लिए जो तकनीक विकसित की जा रही है वह प्राकृतिक कार्बन चक्र, तत्वों तथा खाद्य श्रृंखला को अव्यवस्थित कर रही है। जिससे कृषि पारितंत्र में असंतुलन तथा पैदावार कम हो गई है। अब प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखने के लिए और कृषि तंत्र में टिकाऊपन लाने के लिए अनुसंधानकर्ताओं ने अनेक सुझाव दिए हैं। इनमें से एक गोबर की खाद के साथ जैविक खेती करना है। इस पद्यति ने काफी प्रसिद्धि प्राप्त की है क्योंकि इस पद्यति में तत्वों के चक्र का संतुलन बनाए रखने के लिए तत्वों के आदान प्रदान पर जोर दिया गया है (चित्र: 3 स्वस्थ पशुधन गाय)।

❑

कभी मत सोचना कि मैं किस पद पर काम कर रहा हूं, सोचना यह कि प्रायः जिस आसन पर बैठे हैं उसके प्रति आपकी संपूर्ण निष्ठा होनी चाहिए कि हम क्या कर रहें हैं? यह महत्वपूर्ण है कि हम अपने कार्य को कितनी निष्ठापूर्वक करते हैं।

– श्रीमद् भगवद्गीता

यदि मनुष्य पाप कर भी ले तो उसे पुनः न दोहराए, न उसे छुपाए और न उसमें रत हो, पाप का संचय ही सब दुखों का मूल है।

– गौतम बुद्ध

अमरूद आधारित उद्यान चरागाह पद्धति

सुनील कुमार, अरूण कुमार शुक्ला एवं हर्षवर्धन सिंह

अमरूद एक कठोर प्रवृत्ति वाला वृक्ष है तथा इसके फल में विटामिन "सी" अधिक मात्रा में पाया जाता है। पोषक गुणों में अमरूद सेव से भी अच्छा है। इसका उत्पादन विशेष रूप से उत्तर प्रदेश, बिहार, गुजरात, मध्य प्रदश, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक में होता है।

भूमि और जलवायु

अमरूद विभिन्न प्रकार की भूमि (मिट्टियों) में उगाया जा सकता है फिर भी गहरी बलुई दोमट मिट्टी इसके लिए अच्छी पायी गयी है। यह गर्म व शुष्क जलवायु वाले प्रदेशों में भल प्रकार उगाया जा सकता है।

उन्नत किस्में

इलाहाबादी सफेदा

पौधे 6-7 मीटर ऊंचे प्रति वर्ष फलत, फल-बड़े गोल, चिकना, छिलका मोटा, पकने पर पीलापन रंग के लिए सफेद, गूदा मीठा, सफेद और रसदा, पैदावर 450-600 फल प्रति पौधा। यह किस्म बागवानी हेतु उत्तम है।

लखनऊ-49

पौधे छोटे, 3.5-4.0 मीटर ऊंचे और डालीनुमा फल बड़े नाशपाती के आकर का, छिलका औसत मोटा, हल्का, खुरदरा और पकने पर हल्का पीलापन लिए सफेद होता है। फल: 400-500 फल प्रति पौधा। इस जाति के पौधे ग्वावा विल्ट के लिए सहिष्णु होते है। व्यावसायिक दृष्टि से यह जाति उत्तम प्रमाणित हो रही है।

अभी हाल ही में केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ द्वारा व्यावसायिक दृष्टि से उपयुक्त उन्नत किस्म ''ललित'' का चयन किया गया है। इसका फल गुलाबी एवं वाह्य रूप से केसरिया लाल आभायुक्त होते है। इसकी पैदावार प्रचलित इलाहाबाद सफेदा किस्म से लगभग 24 प्रतिशत अधिक होती है। इस किस्म के फल खाने व संसाधन दोनों के लिए उपयुक्त है। श्वेता- इसके फल सफेद एवं अच्छी स्वाद एवं फलत वाली होती है।

पौधा तैयार करने (प्रवर्धन) की विधियां

अमरूद का प्रसारण की मुख्यरूप से फोरकर्ट चष्मा, स्टूलिंग और विनियर कलम विधियां अपनाने की सिफारिश की जा रही है। जिससे कम समय में फलोत्पादन सम्भव हो।

पौधारोपण

जुलाई-अगस्त तथा सितम्बर पौधा रोपण का उपयुक्त समय है। सिंचित क्षेत्रों में पौधारोपण फरवरी-मार्च महीनों में भी किया जा सकता है। अमरूद के पौधों को 535 मीटर अथवा 636 मीटर की दूरी पर लगाना चाहिए।

उपयुक्त घास: अंजन, गिनी, दीनानाथ एवं केल घास।

उपयुक्त दलहनी चारा: केरिवियन स्टाइलो, स्टाइलो सियाविराना एवं तितली घास।

घास के पौध की तैयारी: मई माह में घास की अच्छी किस्म की 1 कि.ग्रा. बीज को 1 मीटर चौड़ी एवं 5 मीटर लम्बी क्यारी (30-40 क्यारियों) में प्रति क्यारी 25-30 ग्राम बीज को 10 सेमी की दूरी पर पंक्ति में बुआई करते है। बुआई के बाद क्यारियों को बोरे या खजूर के पत्ते इत्यादि से ढक देते हैं और हजारा से हल्की सिंचाई करते हैं। एक सप्ताह में यह अंकुरित हो जाता है तो इसे खोल देते है।

रोपित फल वृक्ष के बीच अन्त: स्थान में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 100 सेमी तथा पौध से पौध की दूरी 50 सेमी की दूरी पर जुलाई माह में तीन माह पुरानी घास के पौध की रोपाई करना चाहिए। तथा दो पंक्तियों के बीच में एक पंक्ति दलहनी चारा की बुआई (4-6 कि.ग्रा. बीज/हेक्टेयर की दर से) किया गया। घासों में पौधशाला तैयाार न होने पर विकल्प स्वरूप जड़युक्त कल्ले भी रोपाई हेतु प्रयोग कर सकते है जिसके लिए 20,000-25,000 जड़युक्त कल्लों की आवश्यकता होती है। घास की दो पंक्तियों के बीच की पंक्ति में दलहनी चारा की बुआई हेतु 4-6 कि.ग्रा. बीज/हे. की आवश्यकता होती है (चित्र: 4 अमरूद के साथ चारे की खेती)।

खाद एवं उर्वरक

पौधा लगाते समय प्रति गड्ढा - गोबर की खाद 20-30 कि.ग्रा.

प्रथम वर्ष: गोबर की खाद 15 कि.ग्रा.+यूरिया 260 ग्रा.+सुपर फास्फेट 375 ग्रा.+पोटैशियम सल्फेट 500 ग्रा.

द्वितीय वर्ष: गोबर की खाद 30 कि.ग्रा.+यूरिया 500 ग्रा.+सुपर फास्फेट 750 ग्रा.+ पोटैशियम सल्फेट 200 ग्रा.

तृतीय वर्ष: गोबर की खाद 45 कि.ग्रा.+यूरिया 780 ग्रा.+सुपर फास्फेट 1125 ग्रा.+पोटैशियम सल्फेट 300 ग्रा.

चतुर्थ वर्ष: गोबर की खाद 60 कि.ग्रा.+यूरिया 1050 ग्रा.+सुपर फास्फेट 1500 ग्रा.+पोटैशियम सल्फेट 400 ग्रा.

पंचम वर्ष: गोबर की खाद 75 कि.ग्रा.+यूरिया 1300 ग्रा.+सुपर (और अधिक) फास्फेट 1875 ग्रा.+ पोटैशियम सल्फेट 500 ग्रा.

आयु के अनुसार एक पेड़ के लिए संस्तुत खाद की खुराक को दो भागों में बांट लें। एक भाग जून में दूसरा भाग अक्टूवर में, तने से एक मीटर दूर चारों ओर वृक्षों के छत्र के नीचे किनारों तक डालें। खाद डालने के तुरन्त बाद सिंचाई कर दें।

अंत:फसल (घास+दलहनी चारा) को 20-30 कि.ग्रा.नत्रजन 20 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश/हे. की दर से देनी चाहिए। आधी नत्रजन पूरा फास्फोरस तथा पोटाश खेत की तैयारी के समय तथा शेष (आधी) नत्रजन घास की रोपाई एवं दलहनी चारा के जमने के 1 माह बाद देना चाहिए।

खाद डालने का उचित मात्रा व समय

फॉस्फोरस और पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा तथा यूरिया की आधी मात्रा जून में तथा यूरिया की शेष मात्रा अक्टूबर में देनी चाहिए।

सिंचाई

अमरूद के छोटे पेड़ों की सिंचाई अच्छी होनी चाहिए जिससे कि जहां जड़ें हैं उस मिट्टी को नम रखा जाए। पेड़ बड़े होने पर गर्मी में 10-15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करते रहें।

देख-रेख: दलहनी चारा के जमने के बाद पंक्ति की खरपतवार वर्षा ऋतु में अवश्य निकाल लेना चाहिए। अन्यथा दलहनी चारा की पौध खरपतवार की वजह से मर जाते हैं या छोटे रह जाते हैं जिससे उपज एवं चारे की गुणवत्ता प्रभावित होती है।

कटाई-छंटाई और सधाई

आरम्भ में सधाई-क्रिया पेड़ों के उत्पादन में वृद्धि सुन्दर और मजबूत ढांचा प्रदान करने के लिए की जाती है। प्रारम्भ में यह देखना आवश्यक है कि मुख्य तने तल से लगभग 90 से.मी. तक कोई शाखा न हो। इस ऊंचाई पर मुख्य तने से 3 या 4 प्रमुख शाखाएं बढ़ने दी जाती है। इसके बाद प्रति दूसरे या तीसरे वर्ष ऊपर से टहनियों को काटते रहना चाहिए, जिससे पेड़ की ऊंचाई अधिक न बढ़ जाए। यदि जड़ में कोई फुटाव निकले तो इसे भी हमेशा काटते रहना चाहिए।

फसल प्रबन्ध

साल में अमरूद के दो प्रमुख फसलें प्राप्त है- एक फसल बरसात के दौरान व दूसरी जाड़े के मौसम में। हालांकि बरसात के दौरान प्राप्त उपज अपेक्षाकृत अधिक होती है परन्तु इसके फल निम्न गुणवत्ता वाले होते हैं और इसके अलावा फल छेदक कीट के साथ-साथ बीमारियों का प्रकोप बहुत होता है। अत: व्यवसाय की दृष्टि से बागवानों को केवल जाड़े की ही फसल लेनी चाहिए। जो वर्षा आश्रित खेती मे कम सिंचाई से भी अच्छी उपज देती है। फसल नियंत्रण हेतु यूरिया 10 प्रतिशत (100 ग्राम प्रति लीटर पानी) इलाहाबाद सफेदा किस्म में और 15 प्रतिशत (150 ग्राम/प्रति ली. पानी) सरदा किस्म में अप्रैल-मई पुष्पन की अवस्था में में दा छिड़काव 8 से 10 दिन के अंतराल पर किया जाता है। इस तकनीक को अपनाने से जाड़े के मौसम में 3-4 गुना अधिक फसल प्राप्त होती है (चित्र: 5 फल से लदे अमरूद के वृक्ष)।

फल तुड़ाई

तुड़ाई थोड़ी सी डंठल व एक-दो पत्र सहित करनी चाहिए। तुड़ाई दो-तीन अंतराल पर करनी चाहिए। खाने में अधिकतर आधे पके फल पसन्द किये जाते है।

उपज

पौध लगाने के दा वर्ष बाद फल मिलना प्रारम्भ हो जाता है। यदि पेड़ों की देखरेख अच्छी तरह से की जाय तो यं 30-40 साल तक उत्पादन की अवस्था में रहेंगे। उपज की मात्रा किस्म विशेष, जलवायु एवं पेड़ की आयु पर निर्भर करती है। वैसे 5 वर्ष बाद एक पेड़ से करीब 400 से 600 तक फल प्राप्त होते हैं (चित्र: 6 अमरूद के साथ चारे की खेती)।

चारा फसल: 4-8 टन शुष्क चारा प्रतिवर्ष प्राप्त होती है जिसका अमरूद की फसल पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

प्रमुख रोग और कीड़े

उकठा रोग

यह रोग बहुत भयावह है और एक बार बाग में संक्रमण होने से कुछ सालों में पूरा बाग नष्ट हो जाता है। अत: ऐसी मिट्टी में पुन: अमरूद का बाग नहीं लगाना चाहिए। इस बीमारी से शाखाएं और टहनियां एक-एक करके ऊपरी भाग से सूखने लगती हैं और नीचे की तरफ सूखती चली जाती है। बाद में पूरा पेड़ सूख जाता है। इस बीमारी से बचाव के लिए निम्नलिखित उपाय करें:

1. जैसे ही रोग का लक्षण दिखलाई दे, उस पेड़ को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
2. बाग को साफ सुथरा रखना चाहिए।
3. ध्यान रहे कि बाग में अधिक पानी न लगने पाये और पानी का निकास भी अच्छा रहे।
4. हरी खाद एवं कार्बनिक खाद का प्रयोग करना उपयोगी होता है।

श्यामवर्ण, फल-गलन या टहनी मार

फलों में संक्रमण होने के फलस्वरूप बनते हुए फल छोटे, कड़े और काले रंग के होते हैं। इस रोग के लक्षण प्राय: वर्षा काल में पकते हुए फलों पर अधिक दिखाई पड़ते हैं।

फल पकने वाली अवस्था में फलों के ऊपर गोलाकार या अनेक धब्बे और बाद में बीच में धंसे हुए स्थान पर नारंगी रंग के फफूंद उत्पन्न हो जाते है। डालियों पर यदि संक्रमण उत्पन्न हो जाए तो डालियां या शाखाएं पीछे से सूखने लगती है।

रोकथाम

रोग ग्रस्त डालियों को काटकर 0.3 प्रतिशत कॉपर आक्सीक्लोराइड के घोल का छिड़काव करें। फल लगने की अवधि पर पंद्रह दिन के अंतराल पर दो-तीन छिड़काव करें।

कीट-नियंत्रण

फल मक्खियां

बरसाती फसल पर इन मक्खियों का प्रकोप अधिक होता है। मादा मक्खी फलों में छेद करके छिलके के नीचे अण्डे देती है।

उपचार

1. मक्खी ग्रसित फलों को प्रतिदिन इकट्ठा करके नष्ट कर दें।
2. जहां तक सम्भव हो बरसाती फसल न लें।
3. प्रौढ़ मक्खियों को मारने के लिए 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी.+5 कि.ग्रा. या चीनी

को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। अगर प्रकोप बना रहता है तो छिड़काव 7 से 10 दिन के अन्तर पर दोहराएं।

छाल खाने वाली सूण्डी

यह कीट प्राय: दिखाई नहीं देता परन्तु जहां पर टहनियां अलग होती है वहां पर इसका मल व लकड़ी का बुरादा जाल के रूप में दिखाई देता है। पुराने वृक्षों पर इसका आक्रमण अधिक होता है। वर्ष में इसकी एक ही पीढ़ी होती है जो जून-जुलाई से शुरु होती है।

उपचार

1. संक्रमित शाखाओं में कीट द्वारा बनाये गये छिद्र में डाईक्लोरोवास (नुवान) में डुबोये रूई के फोहों को किसी तार की सहायता से डाल दें और सुराख को गीली मिट्टी से ढक दें। ध्यान रहे यह कार्य फरवरी-मार्च में करें।
2. सितम्वर-अक्टूबर में 10 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस (नुवाक्रोन) या 10 मि.ली. मिथाइल पैराथियान मैटासिड को 10 लीटर पानी में मिलाकर, सुराखों के चारों ओर की छाल पर लगाएं।

❑

प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

– महर्षि दयानंद सरस्वती

लोकतंत्र हिंदी के बिना चल नहीं सकता और यदि चलता है तो वह झूठा है।

– जैनेंद्र कुमार

जैविक खेती (नापेड कम्पोस्ट)

जे.पी. उपाध्याय एवं महाराज सिंह

अपना पशुधन, अपना खाद। उन्नत बीज, जीवन आधार॥

नापेड कम्पोस्ट

नापेड कम्पोस्ट नई विकसित वह वैज्ञानिक विधि है जिसमें कम्पोस्ट खाद जमीन की सतह पर टैंक बनाकर उसमें प्रक्षेत्र अवशेष तथा बराबर मात्रा में खेत की मिट्टी तथा गोबर की मिलाकर बनाया जाता है। इस विधि से 1 किलो गोबर से 30 किलो खाद 90 से 110 दिन में बनकर तैयार हो जाती है। नापेड कम्पोस्ट निम्न प्रक्रिया द्वारा तैयार किया जाता है।

टैंक निर्माण

नापेड कम्पोस्ट का टैंक उस स्थान पर बनाया जाना चाहिए जहां की भूमि समतल हो तथा जलभराव की सम्भावना न हो। टैंक निर्माण हेतु आंतरिक माप 3.30 (10 फीट) मी. लम्बी, 2 (6 फीट) मी. चौड़ी एवं एक (3 फीट) मीटर गहरी रखनी चाहिए। इस प्रकार टैंक का आयतन 180 घनफीट हो जाता है। टैंक की दीवार 9 इंच चौड़ी रखनी चाहिए। दीवार बनाने में विशेष बात यह है कि बीच-बीच में यथा स्थान छेद छोड़े जाएं जिससे कि टैंक में वायु का आवागमन बना रहे जिससे खाद आसानी से पक सके। प्रत्येक दो ईंटों के बाद तीसरी ईंट की जुड़ाई करते समय 7 ईंट का सुराख छोड़ देना आवश्यक होता है। 3 फीट (1 मी.) ऊंची दीवार में पहले, तीसरे, छठे एवं नवें पानी हर तीन ईंट उंची जुड़ाई के बाद सुराख बनाना चाहिए। दीवार के भीतरी एवं बाहरी हिस्से को यथा संभव गाय या उपलब्ध न होने पर भैंस के गोबर से लेप किया जाता है। तत्पश्चात् टैंक को सूखने के लिए छोड़ देते हैं। इस प्रकार बने टैंक नापेड कम्पोस्ट बनाने के लिए मुख्य रूप से चार चीजों की आवश्यकता होती है।

प्रथम

घर के व्यर्थ खाद्य पदार्थ व कचरा जैसे-फल सब्जी के छिलके, सूखे रहे पेड़ के पत्ते डाल, जड़े, पतली टहनियां आदि। इस तरह के कचरे की 1500 कि.ग्रा. मात्रा की आवश्यकता होती है। यह ध्यान रहे कि इनमें प्लास्टिक, पॉलीथीन, पत्थर एवं कांच के टुकडे शामिल न करें।

द्वितीय

प्रत्येक नापेड टैंक के लिए 100 कि.ग्रा. गाय/ भैंस का गोबर या गोबर गैस संयत्र से निकले गोबर का घोल।

तृतीय

गाय या बैल को बांधने के स्थान की मिट्टी, या तालाब या नाले की सूखी महीन छनी हुई मिटटी की 1750 कि.ग्रा. मात्रा/ मिट्टी कांच, प्लास्टिक, पॉलीथीन रहित होनी चाहिए।

चतुर्थ

मौसम व तापक्रम के आधार पर पानी की आवश्यकता अलग अलग होती है। वर्षा ऋतु में काफी कम वहीं गर्मी के दिनों में अधिक रहती है। कुल मिलाकर करीब 1500 से 2000 लीटर पानी की आवश्यकता प्रति नापेड टैंक के लिए आवश्यकता होती है। पानी की जगह यदि आप के पास गोमूत्र या अन्य पशुमूत्र उपलब्ध हो तो उसे मिला देने से नापेड खाद की गुणवत्ता में बढ़ोतरी होगी।

टैंक (ढांचा) भरना

टैंक भरते समय यह ध्यान रहे कि टैंक भरने की प्रक्रिया एक दिन में ही सम्पन्न हो जाए। टैंक भरने की प्रक्रिया निम्न क्रमानुसार होता है।

पहली परत

व्यर्थ घरेलू पदार्थ आदि अवशेष को 6 इंच की ऊंचाई तक टैंक के निचले सतह से भरते हैं। इस प्रकार व्यर्थ पदार्थ की 30 घनफुट में कुल 100 कि.ग्रा. की आवश्यकता होती है।

दूसरी परत

गोबर के घोल की होती है। इसके लिए 150 लीटर पानी में 4 कि.ग्रा. गोबर अथवा गोबर गैस संयंत्र से निकले गोबर के घोल की ढ़ाई गुना मात्रा में लाते हैं। इस घोल को व्यर्थ पदार्थों द्वारा निर्मित परत के उपर अच्छी तरह भिगोते हैं।

तीसरी परत

छनी हुई सूखी मिट्टी की प्रति परत अधा इंच मोटी दूसरी परत के उपर डालकर समतल कर लेते हैं।

चौथी परत

इसे परत न कह कर पानी के छींटे कह सकते हैं। इसलिए आवश्यक है कि टैंक में लगायी गई परतें ठीक से बैठ जाएं। इस क्रम को क्रमश: टैंक भरने तक उसी क्रम में दोहराते रहते हैं। टैंक भर जाने के बाद 2.5 फीट उंची झोपड़ी नुमा आकार में भराई करते हैं इस प्रकार टैंक भर जाने के उपरान्त गोबर एवं गीली मिट्टी के मिश्रण से टैंक के उपर लेप कर देते हैं। प्राय: इस अनुपात का गड्ढ़ा 10 से 12 परतों में भर जाता है। नापेड कम्पोस्ट की अधिक गुणवता के लिए आधा इंच मिट्टी के परतों के उपर 1.5 किलोग्राम जिप्सम, 1.5 किलोग्राम राक फास्फेट एवं एक किलोग्राम यूरिया का मिश्रण बनाकर 100 ग्राम प्रति परत विखेरते हैं। टैंक भरने के 60 से 70 दिन बाद राइजोवियम पी.एस.बी. एजेटोवैक्टर का कल्चर नापेड टेंक का आकार बनाकर मिश्रण को छोड़े

गए छिद्रों द्वारा प्रवेश करा देते हैं। टैंक भरने के दो से तीन सप्ताह बाद मिट्टी गोबर की लेप में दरारे पड़ने लगती है तथा इस विघटन के कारण भरा गया मिश्रण नीचे बैठने लगता है। ऐसी अवस्था में दुबारा से उपरोक्त विधि द्वारा टैंक भर कर पुन: मिट्टी एवं गोबर के मिश्रण का लेप कर दिया जाता है। यह हमेशा ध्यान देना है कि टेंक में 60 प्रतिशत नमी का स्तर हमेशा बना रहे। इस तरह लगभग 3.0 से 3.25 टन प्रति टैंक नापेड कम्पोस्ट 90-110 दिन में बनकर प्रयोग हेतु तैयार हो जाता है। एक हेक्टेयर के लिए 3.5 टन नापेड पर्याप्त होता है। इस नापेड कम्पोस्ट में पोषक तत्वों की मात्रा नत्रजन के रूप में 0.5 से 1.5 फास्फोरस के रूप में 0.5 से 0.9 तथा पोटाश के रूप में 1.2 से 1.4 प्रतिशत तक पायी जाती है। नापेड टैंक करीब 10 वर्ष तक अपनी पूरी क्षमता से नापेड कम्पोस्ट बनाने में सक्षम रहता है।

नापेड कम्पोस्ट के निर्माण में प्रति टेंक लगभग दो हजार रुपए की लागत आती है। यदि 6 टैंक का निर्माण कर अंतराल स्वरूप एक एक टैंक भर कर नापेड कम्पोस्ट बनाई जाए तो गरीबी के रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले या शिक्षित बेरोजगारों को चार से साढ़े चार हजार रुपए प्रतिमाह से आर्थिक लाभ हो सकता है (चित्र: 7 नापेड कम्पोस्ट बनाने की विधि)।

❑

राष्ट्र के एकीकरण के लिए सर्वमान्य भाषा से अधिक बलशाली कोई तत्व नहीं है मेरे विचार में हिंदी ही ऐसी भाषा है।

लोकमान्य तिलक

हन्दी का आन्दोलन समूचे देश को आत्म निर्भर और समृद्ध बनाने का संकल्प है।

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी

आंवले में वर्षभर किए जाने वाले कृषि कार्य

अरूण कुमार शुक्ला, सुनील कुमार एवं हर्षवर्धन सिंह

जनवरी

1. फसल को पाले से बचाने के उपाय करें। जैसे – बाग की सिंचाई, धुआं करना, सल्फ्यूरिक अम्ल का छिड़काव आदि।
2. देर से पकने वाली किस्में कंचन, चकैया आदि के फलों की तुड़ाई, ग्रेडिंग एवं विपणन का कार्य पूर्ण कर लें।
3. बाग की गुड़ाई करके उपयुक्त आकार के थाले बनवा लें।

फरवरी

1. फल वृक्षों की कटाई–छंटाई – विशेषकर सूखी, रोधी तथा अधिक बढ़ी हुई शाखाओं को काटना।
2. पौधशाला के सम्बन्धित पौधों में मूलवृंत्त से निकल रही शाखाओं को तुरन्त निकाल दें।
3. यदि पौधे की पत्तियां पीली होकर झड़ गयी हों तो खाद एवं उर्वरक का प्रयोग करें।

मात्रा

प्रति पौधा एक वर्ष की उम्र से। नत्रजन 100 ग्राम, फास्फोरस 50 ग्राम, पोटाश 75 ग्राम।

उपरोक्त मात्रा पौधों की उम्र के साथ 10 वर्ष तक बढ़ाते जाएं। इस प्रकार 10 वर्ष या इससे अधिक उम्र के पौधों को नत्रजन 1000 ग्राम, फास्फोरस 500 ग्राम एवं पोटास 750 ग्राम तत्व के रूप में देना चाहिए। भूमि परीक्षण उपरांत भूमि की उर्वरता शक्ति के अनुसार मात्रा घट बढ़ सकती है।

मार्च

1. यदि खाद एवं उर्वरक का प्रयोग किया जा चुका है तो बाग की सिंचाई कर दें।
2. आंवले के पुराने बागों की हल्की जुताई एवं गुड़ाई कर दें ताकि भूमि पर गिरी पत्तियां मिल जाएं तथा खरपतवार नष्ट हो जाएं।
3. गैप फिलिंग का कार्य करें।
4. नव रोपित बाग की सिंचाई कर दें। अधिक पुष्पन एवं फलन हेतु कैल्शियम कार्बोनेट तथा बोरेक्स का 0.4 प्रतिशत मिश्रित घोल का छिड़काव करें।

अप्रैल

1. आंवले के बाग में पुष्पन व फलन की क्रिया प्रगति पर होती है अत: किसी भी कीटनाशी रसायन का छिड़काव न करें अन्यथा मधुमक्खी का आगमन कम हो जायेगा।
2. आंवले की मूलवृत्त करने हेतु बीज की बुवाई कर दें।
3. पौधशाला एवं नवीन उद्यान की सिंचाई, निराई एवं गुड़ाई कर दें।

मई

1. बरसात में नये बाग रोपण हेतु तैयारी प्रारम्भ कर दें।
2. भूमि की दशा के अनुसार 8×8 मीटर की दूरी पर 1 × 1 × 1 मीटर आकार के गड्ढ़ों की खुदाई का कार्य करें।
3. नये रोपित बागों की सिंचाई दो सप्ताह के अन्तर से करते रहें।

जून

1. माह मई के खोदे गये गड्ढ़ों में सामान्य भूमि में गोबर की खाद की मात्रा 20–30 कि.ग्रा., यूरिया 200–300 ग्राम, सिंगल सुपर फास्फेट 400–500 ग्राम, म्यूरेट ऑफ पोटाश 100–150 ग्राम एवं मिथाईल पैराथियान 50 ग्राम प्रति गड्ढ़ा मिट्टी में मिला करके भर दें।
2. पेंसिल मोटाई से मूलवृन्तों पर पैबन्दी चश्मा द्वारा प्रवर्धन प्रारम्भ कर दें।
3. नये अंकुरित बीजू पौधों की पालीथीन बैग्स का अन्यत्र स्थानान्तरण करें।
4. अन्तर सस्यन के लिएं लोबिया आदि की बुवाई कर दें।
5. रासायनिक उर्वरक का प्रयोग माह जनवरी में दर्शायी गयी मात्रा के अनुसार किया जाए।
6. पौधशाला तथा बाग की सिंचाई करते रहें।

जुलाई

1. तैयार गड्ढ़ों में कायिक प्रवर्धित, स्वस्थ पौधों का रोपण करें। नरेन्द्र आंवला–6, नरेन्द्र आंवला–7, कंचन एवं कृष्णा का चयन करें। साथ ही अच्छी फलत के लिए 10 प्रतिशत देशी आंवला तथा अन्य प्रजाति के पौध का भी रोपण करें।
2. पैबन्दी चश्मा द्वारा पौधों का प्रवर्धन कार्य करें।
3. मूलवृन्त से निकल रहे फुटाव को तोड़ते रहें।
4. चयनित शाखाओं के अलावा अन्य शाखाओं को निकालते रहें।

अगस्त

1. यह समय शुष्क क्षेत्र में आंवला का बाग स्थापन का उपयुक्त समय है। आंवला को 8×8 मीटर दूरी पर लगाएं।
2. आंवला के बाग रोपण में एक से अधिक जातियों का रोपण करना अत्यन्त आवश्यक है। उदाहरण– एन.ए.–7 के साथ चकैया या कृष्णा।
3. पौधशाला में पानी की निकासी की व्यवस्था करें।
4. एफिस सूट गाल मेकर ग्रसित टहनी को काटकर निकाल दें तथा उसे जला दें। कीड़ों एवं रोग के निदान हेतु मेटासिस्टाक्स 0.03

प्रतिशत यानि 30 मिली दवा डाइथेन एम 45, 0.3 प्रतिशत यानी 30 ग्राम दवा 10 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

5. 1/2 नत्रजन, 1/2 पोटाश की शेष मात्रा दे दें जिससे फल विकास अच्छा होगा।

सितम्बर

1. सितम्बर के अन्त तक पौधशाला में कलिकायन (चश्मा) बांधने का कार्य पूरा कर देवें।
2. जून, जुलाई एवं अगस्त में की गई कलिकायन में पिचिंग का कार्य नियमित रूप से करते रहें।
3. चश्मा से फूटे अंकुरों में 30 से.मी. तक कोई शाखा न निकलने दें।
4. आंवला के फल सड़न रोग की रोकथाम के लिए ब्लाईटाक्स 30 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी के साथ घोल करके छिड़काव करें।
5. उत्तक क्षति (नेक्रोसिस) यदि फलों पर कहीं दिखाई दे तो 60 ग्राम बोरिक एसिड 10 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें इसे 15 दिन के अन्तराल पर अवश्य छिड़क दें।
6. बागों की निराई,गुड़ाई तथा उचित देखरेख करें।
7. इन्डरबेला कीट का प्रकोप यदि दिखाई दे तो किसी भी कीटनाशक दवा जैसे रोगोर/ मेटासिस्टाक्स/डैमाक्रन 0.03 प्रतिशत की घोल में रूई भिगोकर पतले तार की मदद से छिद्रों में डाले तथा छेदों को चिकनी मिट्टी से बन्द कर दें।
8. फले हुए बागों में 1/2 नत्रजन तथा 1/2 पोटाश की मात्रा दे सकते हैं। यदि अगस्त में नहीं डाली है।
9. यदि अब तक पौधों का रोपण कार्य न किया हो तो अवश्य करें।

अक्टूबर

1. अगैती किस्म की तोड़ाई, ग्रेडिंग एवं विपणन कार्य अक्टूबर में अंतिम सप्ताह से प्रारम्भ कर सकते हैं।
3. बाग की सिंचाई करना आवश्यक है।
4. शूट गाल मेर से ग्रसित टहनी को काट कर निकाल दें तथा रोग ग्रसित टहनी को जलाकर अथवा 3 फिट गहरे गड्ढे में दबाकर नष्ट अवश्य कर दें।

नवम्बर

1. मध्य में तैयार होने वाली जातियों की तोड़ाई प्रारम्भ कर दें।
2. तुड़ाई के बाद फलों की ग्रेडिंग, आकार के अनुसार करें।
3. टोकरी पर फलों का नाम, वजन एवं श्रेणीकरण अवश्य लिखें।
4. एक साल के रोपित बागों के थालों में गुड़ाई करें।
5. दीमक के प्रकोप से बचने के लिए "फोरेट 10 जी" प्रति पेड़ 25-50 ग्राम डालकर मिट्टी से मिला दें।

दिसम्बर

1. सभी जातियों के आंवला फल की तुड़ाई प्रारम्भ कर दें।
2. तुड़ाई के बाद फलों की ग्रेड़िंग आकार के अनुसार करें।
3. इस साल के रोपित पौधों के थालों की गुड़ाई करें।
4. यदि दीमक के रोकथाम के लिए उपचार न किया गया हो तो दीमक के प्रकोप से बचने के लिए फोरेट या डरमेट प्रति पेड़ 25 से 50 ग्राम डालकर मिट्टी में मिला दें।
5. चीटों के प्रकोप से बचने के लिए फालीडाल धूल का छिड़काव 50 ग्राम से 100 ग्राम प्रति पेड़ कर देवें।

❑

हिंदी द्वारा ही सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।

स्वामी दयानंद सरस्वती

अर्द्धशुष्क क्षेत्र में बेर आधारित उद्यान चरागाह पद्धति

सुनील कुमार, अरूण कुमार शुक्ला एवं हर्षवर्धन सिंह

उद्यान चरागाह पद्धति: एक ही प्रक्षेत्र में बेर फल वृक्ष के साथ चारा फसलों (घास एवं दलहनी) चारा की मिश्रित खेती है। यह पद्धति अर्द्धशुष्क एवं शुष्क उष्ण भू-भाग के लिए अत्यन्त उपयोगी है। बेर हमारे देश का बहुत ही प्राचीन एवं लोकप्रिय फल है यह विटामिन सी, ए तथा बी एवं खनिज लवण जैसे- कैल्शियम, फास्फोरस, लौह तथा शर्करा का अच्छा श्रोत है इसलिए इसे 'गरीबों का मेवा' भी कहा जाता है। बेर कम उपजाऊ, मध्यम क्षारीय एवं बंजर भूमि में या कृषि अयोग्य भूमि में कम देख-रेख के साथ उगाया जा सकता है। इसकी खेती राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, गुजरात, उत्तर प्रदेश एवं मध्य प्रदेश में प्रमुख रूप से होती है (चित्र: 8 बेर आधारित उद्यान पद्धति)।

भूमि एवं जलवायु: बेर को विभिन्न प्रकार की जलवायु में उगाया जा सकता है, किन्तु शुष्क एवं अर्द्धशुष्क जलवायु में उत्पन्न बेर अत्यधिक स्वादिष्ट एवं उच्च कोटि के होते है। राजस्थान की रेतीली भूमि से लेकर मध्य प्रदेश की बंजर भूमि एवं दोमट मिट्टी जो हल्की क्षारीय हा उसमें बेर की खेती अच्छी तरह से की जा सकती है इसमें अधिक पाला व गर्मी सहने की असीमित क्षमता होती है।

किस्में: उत्तर प्रदेश एवं पंजाब में मुख्यत: बनारसी कड़ाका, बनारसी पैबन्दी, जोगिया, गोला, हरियाणा में उमरान, कैथली एवं चोचल, राजस्थान में गोला, सेव मुडिया एवं जोगिया की खेती होती है वैसे प्रमुख किस्में गोला, उमरान, मुड़िया, बनारसी कड़का, सेव, जोगिया, नरमा इत्यादि है जो पैदावार, स्वाद एवं आर्थिक लाभ की दृष्टि से लाभकारी सिद्ध हुई है।

प्रवर्धन: बेर का प्रवर्धन छल्ला कलिकायन (रिंग वडिंग) द्वारा किया जाता है।

मूलवृन्त तैयार करना: झरबेरी (जिजिफस न्यूमूलेरिया), जंगली बेर (जिजिफस रोटन्डीफोलिया) या सामान्य बेर (जिजिफस मोरीसियाना) के बीज को मुलबृन्त के लिए प्रयोग किया जा सकता है इसे पॉलीथीन की थैलियों में भी उगाया जा सकता है। बीज को तोड़कर गिरी निकाल कर बोने से जमाव जल्दी होता है।

छल्ला कलिकायन: जब मूलवृन्त 9-12 माह पुराना या पेन्सिल जितनी मोटी हो जाए तो पौध कलिकायन योग्य हो जाता है। जुलाई माह में जब पौधों की छाल काफी रसीली मुलायम हो ता अच्छी किस्मों के मातृ पौधों से पेन्सिल की मोटाई के बराबर मातृ टहनियों का चुनाव कर सकते है, इन्ही मातृ टहनियों से 2-5 सेमी लम्बी जिसके मध्य में कली हो, दोनों तरफ चीरा लगाकर छल्ले के आकार की कली मातृ पौधे से अलग कर लेते है इसी प्रकार मूलवृन्त पर 15 सेमी ऊंचाई पर उसी आकार का छल्ला निकालकर उस स्थान पर मातृ पौधे से लाए हुए छल्ले को लगा देते है तथा 200 माइक्रान मोटी पॉलीथीन (एक सेमी चौड़ी 15-20 सेमी लम्बी) पट्टी इसके ऊपर लपेटते हुए, बांधते है कि कली का भाग खुला रहे तथा इसके अन्दर बरसात का पानी प्रवेश न कर सके।

एक सप्ताह बाद जब कलिका कली से अॅखुए निकलने लगे तो मूलवृन्त की चोटी को काट देते है। जब कली का बढ़ाव शुरू हो तो कलिकायन के ऊपर 2.5 सेमी से मूलवृन्त को काट देते है। कली की लम्बाई 15 सेमी की हो जाए तो पौधा तैयार माना जाता है इसे स्थाई रूप में रोपित (6 से 8 मीटर की दूरी पर) कर देते है। यह कार्य सीधे खेत में इन सीटू ढंग से 6 से 8 मीटर की दूरी पर बीज बोकर भी कर सकते है। इसी प्रकार की कलिकायन द्वारा खेत में लगे पुराने बीजू पेड़ को भी अच्छी किस्म में परिवर्तित किया जा सकता है। इसके लिए अप्रैल-मई में बीजू पेड़ को काट देते है जो नये कल्ले निकलते हैं उन पर छल्ला कलिकायन किया जा सकता है।

रोपण: खेत में लगाने से पहले 6-8 मीटर की दूरी पर 1×1×1 मीत्र लम्बा, चौड़ा एवं गहरा गड्ढा मई-जून में खोद लेते हैं उसमें 25 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद, 1 कि.ग्रा. अमोनियम सल्फेट, 1 कि.ग्रा. सिंगल सुफर फॉस्फेट तथा 250 ग्राम 10 प्रतिशत बी.एच.सी. पाउडर या क्लोरोपाइरीफॉस 10 मिलीलीटर प्रयोग कर देते है। वर्षा ऋतु में पौधों का रोपण गड्ढे के बीचों-बीच कर देते है।

देखरेख: केवल कलिकायन किये हुए शाखाओं को बढ़ने दें, मूलवृन्त से निकली शाखाओं को सिकेटियर की सहायता से काटते रहे, रोग एवं कीट का प्रकोप हो तो रोगनाशी एवं कीटनाशी दवाओं का छिड़काव करें। गर्मी में लू से तथा जाड़े से पाले से पौधों को बचाए।

अन्त:स्थान में चारा फसलों की खेती

घासों की पौधशाला मई में तैयार कर लेनी चाहिए विकल्प रूप से घास की जड़युक्त पौध भी रोपण हेतु प्रयोग किया जा सकती है। इन घासों को वर्षा ऋतु में पंक्ति की दूरी 100 सेमी तथा पौध से पौध की दूरी 50 सेमी पर रोपित किया जाता है। दो घास की पंक्ति के बीच दलहनी चारा की बुवाई की जाती है इसे काटकर खिलाने से पशु को संतुलित चारा प्राप्त होता है। साथ ही भूमि की उर्वरकता में सुधार होता है। बेर हेतु उपयुक्त घासें- अंजन, दीनानाथ एवं केल घास बीज दर 3-4 कि.ग्रा./हे.। बेर हेतु उपयुक्त दलहनी चारा-स्टाइलो हमाटा, क्लाइटोरिया बीज दर 2-3 कि.ग्रा./हे.।

पोषण आपूर्ति: बेर काफी आसानी से अनुपजाऊ भूमि में तैयार होने वाला पौधा है परन्तु अधिक वृद्धि एवं पैदावार के लिए खाद एवं उर्वरक का प्रयोग करना चाहिए। यद्यपि खाद एवं उर्वरक

सारणी 1. बेर फल प्रति वृक्ष पोषण आपूर्ति

पौध की उम्र वर्ष में	गोबर की खाद कि.ग्रा./ पौधा	पोषक तत्व ग्राम/पौधा		
		नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटाश
1	20	100	25	50
2	30	200	50	100
3	40	300	75	150
4	50	400	100	200
5	50	500	125	250
6	50	600	150	300
7	50	700	175	350
8	50	800	200	400

की मात्रा मृदा परीक्षण के बाद निश्चित की जानी चाहिए फिर भी अधिकतर पौधें को उम्र के अनुसार पोषण आपूर्ति इस प्रकार संस्तुति किया गया है।

साथ में लगे घासों को 20–30 कि.ग्रा. नत्रजन 10–20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 20 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर प्रयोग करें। नत्रजन का आधा भाग फॉस्फोरस, पोटाश की पूरी मात्रा वर्षा आरम्भ के तुरन्त बाद एवं 1/2 भाग नत्रजन का फल लगने के बाद दें।

सिंचाई: पौध रोपने के तुरन्त बाद सिंचाई करना चाहिए। जीवनयापन के लिए दो वर्ष तक गर्मी में सिंचाई समय पर करें। फल लगने से पकने तक एक दो सिंचाई अच्छी होती है।

कटाई–छंटाई: आरम्भ में आकार देने के लिए 4–5 शाखाओं को बढने दें पुराने पौधा में फल लगने के पहले कटाई–छंटाई करते है। अत: अप्रैल मई में फल तोड़ने के बाद नियमित कटाई–छंटाई करें जिससे नए कल्ले जल्दी आएं। इससे 20–30 कि.ग्रा. जलाऊ लकड़ी प्रति पौधा मिलती है। 3–5 कि.ग्रा. पत्तियां प्रति पौधा प्राप्त होती है। जिसमें 10–12 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन होती है। जिसे बकरिया चाव से खाती है। फोटो लकड़ी जलाने या वाड़ों की सुरक्षा के काम आती है।

रोग: खर्रा रोग पाउडरी मिल्ड्यू इसके बचाव के लिए 1 मिली 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें (चित्र: 9 बेर वृक्षों से फलों की तुड़ाई)।

कीट: फल मक्खी– इसके बचाव के लिए मैलाथियान 1.5 मिली प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर 2–3 बार करें।

उपज: बेर का कलिकायन पौधा एक वर्ष से फल देना शुरू कर देता है। पूर्ण विकसित पौधा 60–200 कि.ग्रा. फल प्रति पौधा प्राप्त होता है।

घास की उपज: अन्त: फसलों में लगाए गए बहुवर्षीय चारा घासों से 5 वर्ष तक अच्छा चारा प्राप्त होता है। औसतन 3–5 टन प्रति हेक्टेयर शुष्क भार चारा प्रति वर्ष प्राप्त होता है।

आय: अच्छी तरह स्थापित बेर आधारित चारागाह पद्धति से 60–80 हजार रूपये प्रतिवर्ष आय प्राप्त होती है।

❑

अपनी मात्रभाषा बंगला में लिखकर मैं बंगबन्धु तो हो गया, किन्तु भारतबन्धु मैं तभी हो सकूँगा जब भारत की राष्ट्रभाषा में लिखूंगा ।

बंकिम चन्द्र चटर्जी

गुलांचा (गिलिरिसीडिया सेपियम) – कृषि वानिकी उपयोगी प्रजाति में एफिड का तीव्रतम प्रकोप एवं निवारण

नजमुल हसन, प्रदीप कुमार त्यागी एवं रमेश बाबू भास्कर

गुलांचा (गिलिरिसीडिया सेपियम) एक छोटा, तेज वृद्धि वाला दलहनीय वृक्ष होता है जो अमेरिका के उष्णीय क्षेत्रों में पाया जाता है। भारतवर्ष में इसे महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु तथा केरल में अधिक उगाया जाता है। ल्यूसिनिया (सूबबूल) के बाद सामान्यत: यह बहुउद्देशीय दलहनी वृक्षों में दूसरे स्थान पर आता है। यह एक उच्च गुणवत्ता से परिपूर्ण चारा देने वाला वृक्ष है। क्योंकि सुबबूल साइलिड के लिये अत्यधिक पोषी होता है जिसकी वजह से विदेशों में ही नहीं भारतवर्ष में भी सुबबूल को काफी क्षति हुई है। इस कीट ने न केवल विश्व के उष्णीय क्षेत्रों बल्कि भारतवर्ष में भी सुबबूल को काफी नुकसान पहुंचाया है। जबकि गुलांचा साइलिड कीट के प्रति पूर्ण प्रतिरोधी पाया गया है। जिसकी वजह से इसे वर्तमान समय में काफी पसंद किया जा रहा है।

उपयोग

गुलांचा एक बहु उपयोगी वृक्ष है। इसे कई रूपों में उपयोग में लाया जाता है :

चारा एवं खाद्य

जल्दी जल्दी कटाई के कारण इससे प्रचुर मात्रा में पोषक चारा प्राप्त हो जाता है। इसकी पत्तियों का चारा अधिक पसंद किया जाता है। क्योंकि इसमें क्रूड प्रोटीन शुष्क पदार्थ के सापेक्ष 20 से 30 प्रतिशत तक होती है। इसमें क्रूड फाइबर (रेशे) की मात्रा 15 प्रतिशत तथा शुष्क पदार्थ की पाचकता 60-65 प्रतिशत तक होती है। इस चारे को सामान्यत: सभी पशु चाव से खाते हैं। कुछ पशु इसे प्रारंभ में खाना पसंद नहीं करते है परन्तु एक बार पसंद किये जाने पर आने वाली संतति इसे चाव से खाती है। रोमन्थी पशुओं के अलावा अन्य पशुओं में इससे होनी वाली विषाक्तता पायी गयी है।

शुष्क मौसम से पूर्व पेड़ की कटाई छंटाई करने पर चारे की उपलब्धता बनी रहती है। चारे के रूप में उगाने के लिए बाड़ा (घेराबंदी) बनाने के लिए पंक्तियों में दूरी 10 से 50 सेमी. तथा पंक्तियों के बीच दूरी 1 से 4 मीटर रखना चाहिए। बड़े खण्डों या क्षेत्रों में उगाने हेतु पौधे से पौधे की दूरी 50 सेमी. तथा 1 से 3 मी. की दूरी होनी चाहिए। इससे होने वाला उत्पादन 2 से 10 टन प्रति हेक्टेयर है। फलियों की छिलन भी शुष्क मौसम में चारे के रूप में प्रयोग होती है। कम गुणवत्ता वाले चारा जैसे घास, भूसा तथा फसलों के अवशेषों के साथ इस (गुलांचा) उच्च प्रोटीन गुणवत्ता वाले चारे को मिलाकर चारे की पौष्टिकता बढ़ायी जाती है। इसे प्राय: 20 से 40 प्रतिशत तक मिलाया जाता है। गुलांचा को जब सहायक चारे के रूप में खिलाते हैं तो इससे छोटे -बड़े सभी रोमन्थियों में शरीर भार की बढ़ोतरी एवं दूध उत्पादन में वृद्धि पायी गयी है।

खेती पद्धति

गुलांचा को जब हरी खाद के रूप में मिट्टी में मिलाया जाता है तो इसकी उच्च नत्रजन युक्त पत्तियों से एवं अन्य पोषक तत्वों, खरपतवार नियंत्रण, मिटटी में उपयुक्त नमी के कारण फसलों के उत्पादन में बढोतरी हाती है। गुलांचा को चाय, कॉफी तथा कोको के लिए छाया प्रदान करने हेतु भी उपयोग में लाया जाता है। यह कसावा, रतालु, वनिला, काली मिर्च आदि को भी सहारा देता है। गुलांचा द्वारा मृदा को स्वस्थ रखने के गुण के कारण यह सभी पेड़ पौधे भूमि का सही उपयोग कर पाते हैं।

जीवित बाड़ा

उष्णीय क्षेत्रों में गुलांचा सहज सुलभ जीवित बाड़े के रूप में उपयोग होता है। इसे 1 से 2 मी. की दूरी पर लगाया जाता है तथा कटीले तारों या बांस से सीमांकित किया जाता है। इस बाड़े से जलाऊ लकड़ी, मोटी लकड़ी व चारा प्राप्त होता है तथा हरी खाद भी मिलती है।

टिम्बर एवं जलाऊ लकड़ी

इसकी लकड़ी ठोस तथा अधिक समय तक उपयोगी होने के कारण इसे ईंधन के रूप में प्रयोग करते हैं। इसके जलने पर धुआं कम होता है तथा चिनगारी भी नहीं निकलती है। बहुउपयोगी होने के कारण इसे खम्बों, लकड़ी, फर्नीचर तथा कृषि संबंधी औजारों में प्रयोग करते हैं।

समवर्धन

इस प्रजाति को बीज द्वारा आसानी से तैयार किया जा सकता है। एक से दो वर्ष पुराने पेड़ की टहनियों से बड़े कृंतन 1से2.5 मी.लम्बे तथा 6 सेमी.व्यास के तैयार किये जाते हैं। छोटे कृतंन 30 से 50 से.मी.लम्बे 6-12 माह पुरानी टहनियों से तैयार करते हैं। उपयोग में आने वाली शाखायें सीधी, स्वस्थ तथा बिना पार्श्व शाखाओं वाली होनी चाहिए। कृंतन का ऊपरी हिस्सा मोटा तथा मजबूत होना चाहिए तथा एक तिमाही हिस्से को दबा देना चाहिए। बीजों को बुवाई पूर्व उपचारित कर पौधशाला में बोना चाहिए। पौधशाला में दो से तीन माह में पौधे जब 30 सेमी. के हो जाते हैं तब उन्हें अन्यत्र रोपित कर दिया जाता है। सीधे तौर पर बीज द्वारा भी इन्हें उगाया जा सकता है। इसके लिए 2-3 बीजों को एक ही स्थान पर 1-2 सेमी. गहरायी पर बो देना चाहिए यदि गुलांचा को अन्यत्र नए स्थान पर बंजर भूमि पर लगाना हो तो उसमें राइजोबियम जीवाणु को मिला देना चाहिए।

एफिड का प्रकोप एवं प्रबंधन

अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (चारा फसलों) के अंतर्गत रबी मौसम में उरूलीकचंन केन्द्र पर कुछ कृषकों के साथ परीक्षणों का एवं आसपास के क्षेत्रों का निरीक्षण करते समय गुलांचा पर एफिड का अत्यधिक प्रकोप देखा गया था मुख्यत: वहां जहां पर इसे जीवित बाड़ा, बाड़ा या भेड़ बकरियों के चारे के लिए उगाया गया था। अत्यधिक प्रभावित पौधों में पत्तियां ऐंठ गयी तथा काली पड़ गयी जिससे नयी पत्तियां पौधे से गिर गयी, तदुपरान्त पौधे के शीर्षस्थ अंग मर गये थे। एफिड, तने, मुख्य शाखा का शीर्षस्थ भाग, नये पौधों के कोमल अंग, फलियों तथा प्रौढ़ पौधे के फूलों से रस चूसते हैं। एफिड का नये पौधों में तीव्रतम प्रकोप होने पर पौधे सूख जाते हैं तथा मर भी जाते है जबकि पुराने पौधों में चारे के गुणवत्ता व उत्पादन कम हो जाता है। काफी नजदीकी परीक्षण करने पर देखा गया कि एफिड 1–2 मी.मी. लम्बा व छोटा था जिसका शरीर अंडाकार तथा विभिन्न रंगों में था। नये कीट पर मोम का आवरण था जबकि प्रौढ़ में मोम का आवरण नहीं था। यह दलहनीय एफिड (एफिस क्रेसिबोरा) से मिलता जुलता था। (चित्र: 10 गुलांचा पर एफिड प्रकोप) जो इण्डोनेशिया में गुलांचा पर पाया जाता है। आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण कुछ विषाणुओं के लिए यह संवाहक का कार्य भी करता है। शुष्क क्षेत्रों में वृहत स्तर पर उगाये जाने पर भी गुलांचा में कीट व व्याधियों का प्रकोप कम ही पाया जाता है। साधारणतया गुलांचा के प्रति दृष्टिकोण यही है कि जहां पर लगा होता है वहां व्याधियों व कीटों का प्रकोप कम होता है। हालांकि इस कीट का गुलांचा पर अधिक प्रकोप होता है जो प्राय: बदलते जलवायु के कारण होना प्रतीत होता है। उदाहरण के लिए गर्म तापमान लगातार सूखे की स्थिति तथा असामान्य वर्षा के कारण कीट तथा व्याधि प्रभावित हुए है। यह भी माना गया है कि कीट व व्याधियों के एवं मेजबान की भौगोलिक परिवर्तन होने के कारण नयी व्याधियां विकसित हो गयी है तथा कम महत्वपूर्ण व्याधियों एवं कीटों का अस्तित्व बढ़ गया। अत: इसके निदान के लिए तुरन्त आवश्यक कदम उठाने की आवश्यकता है। जिससे इसके प्रसार को रोका जा सके।

हानिकारिक रसायनों रहित कीट प्रबंधन

- फसल का लगातार निरीक्षण करते रहना चाहिए।
- आवश्यक होने पर निश्चित स्थान पर ही छिड़काव करें।
- जैव रसायनों का प्रयोग करें जो प्राकृतिक दुश्मनों को नुकसान नहीं पहुंचाते (जैसे- नीम, राख व साबुन का पानी) व्यावसायिक स्तर पर तैयार नीम आधारित कीटनाशियों का छिड़काव 1–3 प्रतिशत की दर से या नीम गुठली अर्क 50 ग्राम प्रति ली.सात दिन के अंतराल से छिड़काव करें।
- प्राकृतिक दुश्मनों का संरक्षण, जो एफिड को प्राकृतिक रूप से नष्ट करने में सहायक हों एवं उनकी संख्या वृद्धि को प्रोत्साहित करने का प्रयत्न करें।
- कृंतन व लोपिंग का प्रबंधन अर्थात सही समय पर चारा हेतु कटाई।

❑

मैं सब भाषाओं की इज्जत करता हूँ परन्तु मेरे देश में हिंदी की इज्जत न हो मैं यह सह नहीं सकता।

विनोबा भावे

कांगड़ा घाटी में चरागाह क्षेत्र एवं पशुधन विकास की सम्भावनाएं

जयप्रकाश सिंह, रिचा सोनी, रामशरण चौरसिया एवं नीरज कुशवाहा

कांगड़ा घाटी हिमाचल प्रदेश में शिवालिक और मध्य हिमालय पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य स्थित है जहाँ उष्ण से लेकर उपोष्ण कटिबन्धीय प्रजाति के मिश्रित चरागाह पहाड़ी ढलानों के सोपानों पर छोटे और मध्यम आकार (0.60-1150 हे) में वनों के किनारे अथवा कृषि क्षेत्रों के उपान्त में मिलते हैं। इस क्षेत्र के चरागाह समुद्र तल से 1000 मी. से 1800 मी. के मध्य स्थित हैं तथा यहां की औसत वार्षिक वर्षा 1200-2000 मि.मी. है। अर्थ एवं सांख्यिकीय निदेशालय, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार के अनुसार यहाँ 87928 हे. (15.219 प्रतिशत) क्षेत्र पर चरागाह है। राजस्व विभाग द्वारा तैयार इस आंकड़े में चरागाहों की वर्तमान स्थिति एवं उसकी उत्पादकता तथा उपयोग आदि की कोई जानकारी न होने के कारण इस क्षेत्र में पशुधन आधारित चारा उत्पादन-उपयोग तंत्र विकसित करने में अनेक जटिलतायें सामने आती है। उपरोक्त समस्याओं से निपटने तथा चरागाह क्षेत्रों के प्रबन्धन हेतु भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान ने सुदूर संवेदी उपग्रह द्वारा प्राप्त छवि चित्रों एवं जीआईएस (भौगोलिक सूचना तंत्र) तकनीक का प्रयोग करके यहां के चरागाह क्षेत्रों का निरूपण एवं मूल्याकंन करने का प्रयास किया। वर्तमान समय में क्षेत्र आधारित प्राकृतिक संसाधनों के मूल्याकंन आदि में सुदूर संवेदी तकनीक विश्वसनीय, कम खर्चीला तथा समयबद्व नतीजे की वजह से अपरिहार्य हो गया है। उपग्रह द्वारा प्राप्त छवि चित्रों की सही विवेचना करके जीआईएस द्वारा चरागाह क्षेत्रों का निरूपण एवं मानचित्रण किया गया है। (चित्र: 11)

वर्तमान उत्पादन एवं उत्पादकता को जानने के लिए जीपीएस आधारित क्षेत्र मुल्याकंन करके सैंपलिंग किया गया तथा इस सूचना को जीआईएस द्वारा अनुमानित आंकलन करके समूचे क्षेत्र में चरागाह क्षेत्र से चारा उत्पादन का जियोडाटावेस तैयार किया गया। चरागाह क्षेत्रों पर चराई तथा दबाव जानने हेतु पशुधन की गणना एसीयू में करके उनकी चारा की जरूरतों का आंकलन किया गया तथा प्रति यूनिट क्षेत्र में चारा उपलब्धता की स्थिति को स्पष्ट तरीके से दर्शाया गया है। चरागाह क्षेत्रों के पूर्ण एवं अर्थपूर्ण जानकारी उपलब्ध हो जाने के बाद पशुधन आधारित उत्पादन तंत्र विकसित किया जा सकता है।

चरागाह क्षेत्रों का निरूपण

कांगड़ा घाटी के अन्तर्गत 19 ब्लाक आते हैं। जिनका कुल क्षेत्रफल 69,781.73 हेक्टेयर है। चारागाहों के प्राप्त आंकड़ों की प्रतिशतता के आधार पर इन्हें (0-10 न्यूनतम वर्ग), (10-20 मध्यम वर्ग) एवं (20-25 उच्चतम वर्ग) में वर्गीकृत किया गया है (सारणी-1)।

पशुधन विकास व चारा उत्पादन परिदृश्य

पशुधन विकास में सबसे महत्वपूर्ण है चारे की निरन्तर उपलब्धता एवं उन्नति चराई पसन्द मवेशी (गाय, भैंस, भेड़ एवं बकरी) मुख्यत: चारे पर निर्भर रहते हैं। सारणी-1 में दिये गये चरागाह के क्षेत्रफल को देखते हुए यह अनुमान लगाया जा सकता है कि चारागाह के क्षेत्र में कितने सुधार की जरूरत है। जिले के समस्त पशुधन (गाय, भैंस, भेड़ एवं बकरी) की गणना

सारणी 1. भू-स्थानिक सूचना द्वारा लिये गये कांगड़ा घाटी के चारागाह क्षेत्रफल की गणना।

ब्लाक	क्षेत्रफल (हे.)	चरागाह		विभिन्न स्तर पर चारागाह वर्गीकरण
		कुल क्षेत्रफल (हे.)	क्षेत्रफल (%)	
कांगड़ा	28429.39	5803.18	20.41	उच्चतम वर्ग
खुड़िया	16511.09	4102.44	24.85	उच्चतम वर्ग
धर्मशाला	34843.39	5457.08	15.66	मध्यम वर्ग
थरूल	5831.55	922.61	15.82	मध्यम वर्ग
बरोह	13477.15	2271.79	16.86	मध्यम वर्ग
डेरा गोपीपुर	65416.26	10526.42	16.09	मध्यम वर्ग
हरचकियां	7395.88	1415.03	19.13	मध्यम वर्ग
जसवान	25389.44	4408.67	17.36	मध्यम वर्ग
जावेली	31415.85	5108.80	16.26	मध्यम वर्ग
रक्कर	10035.25	1952.00	19.45	मध्यम वर्ग
इंदौरा	32980.15	4073.64	12.35	मध्यम वर्ग
जयसिंहपुर	13275.65	1768.03	13.32	मध्यम वर्ग
नरपुर	58782.46	6960.03	11.84	मध्यम वर्ग
पालमपुर	44426.40	5946.24	13.38	मध्यम वर्ग
धीरा	8377.78	1208.33	14.42	मध्यम वर्ग
फतेहपुर	24360.32	3431.92	14.09	मध्यम वर्ग
शाहपुर	26866.01	2821.58	10.50	मध्यम वर्ग
बैजनाथ	21325.19	1529.77	7.17	न्यूनतम वर्ग
मुल्तान	94693.05	74.17	0.08	न्यूनतम वर्ग

सारणी 2. कांगड़ा घाटी के तहसील स्तर पर चरागाहों की उपलब्धता एवं आवश्यकता की गणना।

तहसील	भौगोलिक क्षेत्रफल (हे.)	चरागाह क्षे. (हे.)	पशुधन योग (एसीयू में)	भूमि (एसीयू/हे.)	चरागाह क्षे. (एसीयू/हे.)	चारा (टन/वार्षिक)	
						आवश्यकता	चरागाहों से उपलब्धता
बैजनाथ	21325.19	1529.77	27904	1.31	18.24	104391	3809
बरोह	13477.15	2271.79	13363	0.99	5.88	49964	5657
डेरा गोपीपुर	65416.26	10526.42	65516	1.0	6.22	240838	26211
धर्मशाला	34843.39	5457.08	32780	0.94	6.01	122365	13588
धीरा	8377.78	1208.33	8525	1.02	7.06	31697	3009
फतेहपुर	24360.32	3431.92	30170	1.24	8.79	111076	8545
हरचकियां	7395.88	1415.03	7606	1.03	5.37	28287	3523
इंदौरा	32980.15	4073.64	34756	1.05	8.53	127680	10143
जयसिंहपुर	13275.65	1768.03	18843	1.42	10.66	69937	4402
जसवान	25389.44	4408.67	16091	0.63	3.65	58967	10978
जावेली	31415.85	5108.8	48673	1.55	9.53	180467	12721
कांगड़ा	28429.39	5803.18	48020	1.69	8.27	178206	14450
खुड़िया	16511.09	4102.44	18570	1.12	4.53	68780	10215
मुल्तान	94693.05	74.17	9831	0.1	132.54	38622	185
नरपुर	58782.46	6960.03	64511	1.1	9.27	238702	17330
पालमपुर	44426.4	5946.24	51931	1.17	8.73	193071	14806
रक्कर	10035.25	1952	15328	1.53	7.85	56118	4860
शाहपुर	26866.01	2821.58	29704	1.11	10.53	110460	7026
थरूल	5831.55	922.61	6233	1.07	6.76	23123	2297
कांगड़ा जिला	563832.26	69781.73	548355	0.97	7.86	2032751	173757

वयस्क पशु इकाई (एसीयू) में करने पर पता चलता है कि कुल भौगोलिक क्षेत्र के हिसाब से प्रति हेक्टेयर इकाई पर इनकी संख्या 0.97 है। जोकि न्यून दबाव दर्शाता है। परन्तु जब यह आंकलन चरागाह क्षेत्र के आधार पर किया गया तो पता चलता है कि यह दबाव 7.86 एसीयू/हे. जोकि अधिक है। सुदूर संवेदी छवि चित्रों के माध्यम से इन चरागाहों में चारा उपलब्धता का आंकलन किया गया तथा समस्त पशुओं चारा आवश्यकता की गणना करने पर पता चलता है कि प्रति यूनिट चारा उपलब्धता में क्षेत्रीय विषमता अधिक है। उदाहरण के लिए बैजनाथ का चरागाह क्षेत्रफल 18.24 एसीयू/हे. व जसवान का चरागाह क्षेत्रफल 3.65 एसीयू/हे. प्राप्त हुआ जोकि क्षेत्रीय विषमता को प्रदर्शित कर रहा है। पशुधन विकास की पद्धति के लिए चारे की यह मात्रा पर्याप्त नही है (सारणी-2)। चारा उत्पादन एवं पशुधन विकास की इस समस्या को दूर करने का प्रयास किया जा रहा है यह एक जटिल प्रक्रिया है। जीआईएस तकनीक द्वारा कांगड़ा में उपस्थित चरागाह क्षेत्रफल को आंकलन कर एवं कृषि अयोग्य भूमि में चारा उत्पादन पद्धति को अपनाकर चारा एवं पशुधन विकास दोनों में सुधार किया जा सकता है। इसके लिए चारों की उत्तम प्रजातियां एवं अच्छी उपज के बीजों को बढ़ावा देकर एवं कृषि अयोग्य भूमि में चारे की खेती करनी चाहिये। इससे चारा एवं पशुधन दोनों को परिपूर्ण तरीके से विकसित कर सकते हैं।

पशुधन आधारित चारा उत्पादन पद्धति को विकसित एवं सही विधि से कार्यान्वित करने के लिये निम्नलिखित महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर ध्यान देकर इस समस्या का समाधान सम्भव है।

- चारागाह क्षेत्रों को बाड़, मेंड़ आदि विभिन्न विधियों को अपनाकर सुरक्षित करना।
- उत्तम एवं अच्छी उपज वाले प्रजाति के बीजों का उपयोग करना।
- अनुपयोगी भूमि में चारा फसलों की खेती करना।
- खेतों की मेंड़ों पर चारा घासों की रोपाई करना जिससे चारे की निरन्तर उपलब्धता बनी रहे।
- वन एवं चराई क्षेत्रों में चारा फसलों के संतुलन को बनाए रखना।
- चारे का भंडारण एवं संरक्षण (साइलेज के रूप में) कर उसे विभिन्न विधियों से सुरक्षित रखना।
- चारा उत्पादन बढाने के लिये चरागाहों पर विभिन्न चक्रण चराई विधि को अपनाना।

चरागाहों में उत्पन्न होने वाली झाड़ी एवं खरपतवार को नियंत्रित कर चरागाह को संतुलित रखना (चित्र: 12 कांगड़ा घाटी में संरक्षित प्राकृतिक चरागाह), (चित्र: 13 कांगड़ा घाटी में भंडारण हेतु चारे की कटाई)।

❑

चारा एवं पशुधन की घटती उत्पादकता

साधना पाण्डेय

भारतीय कृषि व्यवस्था पारम्परिक रूप से पशुधन विकास से जुडी हुई है । प्राचीन काल से हमारे देश का मूलाधार परम्परागत खेती एवं पशुपालन रहा है। हरित क्रान्ति की सफलता के बाद आज के पृष्ठभूमि में श्वेत क्रान्ति का विचार चल रहा है। पशुधन विकास हेतु चारे की अहम् भूमिका नजरअंदाज नहीं की जा सकती है। हरित क्रान्ति केवल धान, गेहूँ, ज्वार, मक्का, कपास, गन्ना इत्यादि फसलों में दिखाई दी लेकिन आज भी पशुओं हेतु 30-35 प्रतिशत हरा चारा एवं 30 प्रतिशत सूखे चारे की कमी है। दाने की कमी करीब 47 प्रतिशत की है। हमारे देश में पशुओं की संख्या संसार के पशुओं की संख्या का लगभग 20 प्रतिशत है। लेकिन इन पशुओं को भरपेट संतुलित आहार एवं चारा मुश्किल से ही मिल पाता है। इसका मुख्य कारण है खाद्यान्न की बढ़ती मांग और चारे के आधीन भूमि का बहुत कम प्रयोग। हमारे देश में कुल कृषि भूमि के 4.4 प्रतिशत क्षेत्र में हरा चारा उगाया जाता है। जो कि अब घटकर 3.3 प्रतिशत रह गया है। इस सीमित चारा क्षेत्र और देश में पशुओं की बढ़ती दिन प्रतिदिन वृद्धि के कारण चारे की उन्नत किस्में विकसित करके उत्पादकता को बढ़ाया जाना अति आवश्यक हो गया है (चित्र: 14 उन्नत चारे की आस में पशुधन)।

उत्पादकता को प्रभावित करने वाले मुख्य कारण

कृषि जोतों का छोटा होना

तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या एवं एकाकी परिवारों के प्रचलन से कृषि भूमि पर बुरा असर पड़ा है। सम्मिलित परिवार की बड़ी भूमि इसी कारण छोटे-छोटे टुकड़ों में बटती गई व छोटे तथा सीमान्त किसानों की संख्या में वृद्धि होने लगी। बहुत से पशुपालक भी अब छोटे एवं सीमान्त किसान ही हैं। उनके लिये छोटे खेतों में अलग से चारे के लिये स्थान सुनिश्चित करना मुश्किल हो जाता है। क्योंकि वो अनाजों, दालों तथा तिलहन आदि को अधिक महत्व देते हैं। एक सर्वेक्षण के आधार पर पाया गया है कि मांग का लगभग 50-70 प्रतिशत चारा ही (हरा एवं सूखा) अभी उपलब्ध है। इस कमी को पूरा करने के लिये कृषि योग्य भूमि की भारी कमी है।

जनसंख्या वृद्धि के कारण खाद्य फसलों की मांग में भी तेजी से वृद्धि हुई है। जिसके कारण न केवल चारा योग्य भूमि में कमी हुई है बल्कि जंगलों, वन चरागाहों एवं जन चरागाहों आदि की भी भारी कमी आई है। इस तरह चारा उपलब्धता में कमी एवं प्राकृतिक संसाधनों के दोहन में अधिकता आई है।

किसानों की खराब आर्थिक स्थिति

किसानों की आर्थिक स्थिति भी बहुत अच्छी नहीं है। प्राय: वो ऐसी फसलों को महत्व देते हैं जिनसे उन्हें अधिक लाभ हो। अत: चारा संबंधित तकनीकों को वे अधिक नहीं अपनाना चाहते हैं क्योंकि जानवरों से प्राप्त दूध एवं दुग्ध पदार्थों मांस, अण्डा, आदि से अभी भी सीधे रूप में किसानों को अधिक लाभ नहीं मिल रहा है।

गांवो में शिक्षित बेरोजगारों की संख्या भी अशिक्षित बेरोजगारों की अपेक्षा बहुत ज्यादा है। पढ़े लिखे युवक खेती करने के बजाए नौकरी करना अधिक पसन्द करते हैं। जो कि कृषि के विकास के लिए अत्यन्त दुखद है। पढ़े लिखे लोगों की कृषि के प्रति उदासीनता के कारण नई-नई तकनीकों का प्रसार किसानों के मध्य ठीक से नहीं हो पा रहा है।

सूखे एवं बाढ़ से क्षति

कृषि उत्पादन, चरागाह उत्पादन तथा पेयजल आदि की पूर्ति के लिये पर्याप्त वर्षा का होना अति आवश्यक है किन्तु सूखे के कारण फसलों एवं जानवरों दोनों को ही भारी नुकसान हो रहा है एवं इनकी उत्पादकता काफी हो गई है। सूखे की स्थिति प्राय: नदियों के किनारों, बेकार व बंजर भूमि, सड़कों के किनारे की भूमि पर चारा वृक्षों का रोपण करना चाहिए। सूखे चारे का उचित रूप से प्रयोग करना चाहिए। चारा संरक्षण संबंधी तकनीकों को अपनाना चाहिए। यूरिया मोलेसस - मिनरल ब्लाक का प्रयोग करना चाहिए। अनुपजाऊ व परती भूमि पर दलहनी चारा जैसे सुबबूल आदि को उगाना चाहिए।

चारे को संरक्षित करके इसे आसानी से बेल्स या फील ब्लाक रूप में अधिक उत्पादकता वलोा क्षेत्रों से कम उत्पादकता वाले क्षेत्रों को भेजा जा सकता है। किन्तु अभी ये तकनीक किसानों के मध्य प्रचलित नहीं है अधिक खर्च, मुश्किल विधि एवं तकनीक की अनुपलब्धता आदि इसके मुख्य कारण हैं।

बाढ़ अथवा जलभराव वाले स्थानों में पशुधन सबसे अधिक प्रभावित होता है क्योंकि पशुओं को प्रतिदिन चारा अधिक मात्रा में चाहिए व अधिक स्थान घेरता है एवं भंडारण की समस्या हो जाती है।

हरे चारे की कमी

प्राय: जानवरों के लिये चारे की कमी होती जा रही है। अत: आवश्यकता है कि हरे चारे के उत्पादन को अधिकाधिक बढ़ाया जाए। मुख्यत: खरीफ में हरा चारा बहुतायत में होता है, तत्पश्चात् रबी में एवं जायद में बहुत कम चारा होता है। अत: अधिक उत्पादकता वाले मौसम में हरे चारे

को उगाकर इसे उचित संरक्षण विधियों द्वारा आगे के समय के लिये सुरक्षित रख लेना चाहिए। फीड ब्लाक, बेल्स एवं लीफ मील आदि तैयार करके इन्हें आसानी से अधिक उत्पादकता वाले क्षेत्रों से कम उत्पादकता वाले क्षेत्रों में भेजा जा सकता है।

सूखे चारे की कमी

जैसे-जैसे कृषि उत्पादकता में कमी होती जा रही है वैसे ही सूखे चारे की भी कमी होती जा रही है। इसी कारण जानवरों को बांध कर खिलाना और भी कम होता जा रहा है तथा ज्यादातर जानवर चराई पर ही निर्भर हो रहे हैं। उत्पादन के साथ-साथ सूखे चारे की गुणवत्ता में भी काफी कमी आई है। निम्नस्तर के चारे में पशुओं को नुकसान पहुंचाने वाले तत्व होते हैं। तथा इसका पाचन भी बहुत धीमी गति से होता है। इसे दूर करने के लिए सूखे चारे को विभिन्न विधियों का प्रयोग करके सुपाच्च बनाया जा सकता है। जैसे कुट्टी करना, पानी में भिगोना, भाप के द्वारा, यूरिया का प्रयोग, रासायनिकों के प्रयोग द्वारा एवं अधिक गुणवत्ता वाले चारे के साथ मिलाना आदि।

अनियंत्रित चराई

चूंकि सूखे चारे एवं हरे चारे की कमी होती जा रही है इसलिये ज्यादातर किसान भाई चराई द्वारा ही जानवरों का पेट भर रहे हैं। अत्यधिक चराई होने के कारण हमारे प्राकृतिक चरागाह धीरे-धीरे कम हो रहे हैं एवं बंजर भूमि में बदलते जा रहे हैं। इस प्रकार आवश्यक/उचित चारा न उपलब्ध होने के कारण जानवरों की उत्पादकता भी कम होती जा रही है। चरागाहों के कम होने से हरा चारा भी कम होता जा रहा है। घटती कृषि उत्पादकता, जंगल के पास होना, कृषि योग्य भूमि का आकार छोटा हो जाना, एवं दूध तथा चारे हेतु बाजार तक किसानों की पहुंच न होना ही अनियंत्रित चराई के प्रमुख कराण हैं।

निम्न उत्पादकता वाले जानवर

प्राय: जानवरों को मुख्य फसलों के बाई प्रोडक्टस ही किसानों द्वारा खिलाये जाते हैं। जिनमें आवश्यक तत्वों की भारी कमी होती है ऐसी परिस्थितियों में निम्न अथवा मध्यम श्रेणी जानवर ही उत्पादक सिद्ध होते हैं। अत: ऐसी परिस्थितियों में उच्च नस्ल वाले जानवर रखना नामुमकिन होता है। इस प्रकार से निम्न स्तर का चारा एवं चरागाह, तीव्र ग्रीष्म, सुपाच्य तत्वों की कमी, चारे की अनुपलब्धता, खड़े एवं रेशेदार चारे का प्रयोग ही जानवरों की निम्न उत्पादकता के प्रमुख कारण हैं।

खनिज लवणों की कमी

ज्यादातर खेती योग्य भूमि की मृदा में आवश्यक खनिज पदार्थों की कमी होती जा रही है जिसके कारण इसके उगाये गये चारे में भी खनिज तत्व कम होते हैं। जिससे जानवरों को आवश्यक खनिज लवण प्राप्त नहीं हो पाते हैं। खनिज तत्वों की कमी कम सुपाच्च भोज्य तत्वों की क्रियाशीलता को कम कर देती है। साथ ही दुग्ध उत्पादन में कमी, अनियमित प्रजनन क्षमता, निम्न उत्पादकता, एवं स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं भी इसी कारण से उत्पन्न हो जाती हैं। अत: आवश्यक है कि किसान भाई अलग से मिनरल मिक्सचर (खनिज लवण) चारे में मिलाकर जानवरों को खिलाएं।

जन सहभागिता अभियान के क्रियान्वयन में कमी

जंगलों को बचाने के लिए एवं इनमें अनियंत्रित चराई बंद करने के लिये वन विभाग द्वारा चलाये जा रहे जन सहभागिता अभियान को अभी भी बहुत सी जगहों पर कड़ाई से पालन नहीं किया जा रहा है। इस अभियान का उचित अनुपालन करके जंगलों में अनियंत्रित चराई को रोका जा सकता है।

पशुओं का खराब स्वास्थ्य

ज्यादातर जानवर खुरपका-मुंहपका, फड़सूजा तथा गलघोंटू से ग्रसित हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त बाह्य एवं अंत: परजीवी भी जानवरों को भारी क्षति पहुंचाते हैं। वाह्य परजीवी जैसे-जू आदि .तथा अन्त: परजीवी जैसे- पेट में कीड़े (फीताकृमि,गोलकृमि) तथा जानवरों में थनैला रोग भी बहुत पाया जाता है। किसान भाइयों की टीकाकरण के बारे अनभिज्ञता इन बीमारियों का प्रमुख कारण है। अत: वर्षा ऋतु से पहले ही जानवरों का टीकाकरण अवश्य करा लेना चाहिए। साथ ही जानवरों के आसपास स्वच्छता का भी विशेष ध्यान रखना चाहिए।

चारा तकनीक हस्तान्तरण की समस्याएं

ज्यादातर राज्यों में चारे से संबंधित योजनायें बनाना एवं उनका क्रियान्वयन आदि पशुपालन विभाग की जिम्मेदारी है। इन विभागों ने तकनीक हस्तान्तरण एवं उनके प्रचार प्रसार का कार्य पशु चिकित्सकों या पशु विज्ञान स्नातकों द्वारा किया जाता है। जबकि ये लोग ज्यादातर पशुनस्ल सुधार, कृत्रिम गर्भाधान एवं स्वास्थ सुधार आदि पर अधिक जोर देते जबकि चारा संबंधित तकनीकों के प्रसार पर कम ध्यान दिया जाता है। उच्च गुणवत्ता वाले चारा बीजों का भी प्रसार पर्याप्त किट एवं जानकारी न होने के कारण नहीं हो पाता है। सरकार द्वारा चारा फसलों के प्रदर्शन एवं मिनी किट आदि के बारे में सार्थक प्रयास न होने के कारण चारा तकनीकी हस्तान्तरण ठीक से नहीं हो पा रहा है।

❑

कृषि के बदलते परिवेश में किसानों की सेवा में : किसान काल सेंटर

सत्यप्रिय, महाराज सिंह एवं राजीव कुमार अग्रवाल

भारतवर्ष के विभिन्न राज्यों में तकनीकी सूचना के प्रसार के अभाव के कारण किसान भाई उन्नत कृषि तकनीकी ज्ञान से वंचित रह जाते हैं। भारत के वैज्ञानिकों ने कृषि तकनीक तो बहुत ईजाद कर ली है, मगर अभी भी किसान भाई इनमें से कई तकनीकों से अनजान हैं। इन कमियों को दूर करने के लिए कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र, राज्य सरकार एवं गैर सरकारी संगठन व विभिन्न प्रसार माध्यमों द्वारा अपने स्तर से प्रयासरत हैं।

उपरोक्त कमियों को दूर करने हेतु जनवरी, 2004 में कृषि सहकारिता विभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार ने देश के सभी राज्यों में किसान काल सेंटर स्थापित करने का निर्णय लिया। किसान काल केन्द्र का मुख्य उद्देश्य किसानों की समस्याओं का उचित निदान क्षेत्रीय भाषाओं में अतिशीघ्र उपलब्ध कराना है।

इसकी दूरभाष संख्या है 1551 इस दूरभाष से राज्यों/जिलों के स्थानीय परिवेश के अनुकूल, स्थानीय स्तर पर अपनी समस्याओं की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। ज्यादातर राज्यों में कृषि विश्वविद्यालय अथवा सरकारी विभाग किसान काल सेंटर के नोडल केन्द्र हैं।

किसान काल केन्द्र की संरचना

किसान काल केन्द्र की त्रिस्तरीय संरचना निम्न प्रकार है :-

क. व्यावसायिक रूप से संचालित काल (स्तर-I)

ख. प्रत्येक प्रतिष्ठान में एक उत्तरदायी केन्द्र जिसमें बहुत विशेषज्ञ उपलब्ध होते हैं। (स्तर-II)

ग. नोडल केन्द्र (जिसमें सभी क्षेत्रीय किसान काल केन्द्र जुड़े होते हैं। स्तर-III जोकि राज्य कृषि विश्वविद्यालय या सरकारी एजेन्सी होती है)।

स्तर-I पर सुविधाएं

स्तर-I पर तकनीकी संरचना जरा जटिल होती है। भारत सरकार निगम लिमिटेड द्वारा एक टेलीफोन लाइन लगा होता है जिसका कनेक्शन छह व्यक्तियों के पास लगा होता है। कम्प्यूटर हर व्यक्ति के पास लगा होता है। इस कम्प्यूटर में सूचनाएं एकत्रित रहती हैं। तथा किसानों के प्रश्नों का रिकार्ड रखा जाता है। यहां पर पदस्थापित कृषि स्नातक कम्प्यूटर में संग्रहित सूचना तथा अपने अनुभव के आधार पर किसानों के प्रश्नों का जवाब देते हैं।

स्तर-II पर सुविधाएं

स्तर-II को तकनीकी प्रक्रिया केन्द्र के रूप में व्यवहार किया जाता है एवं यह किसान काल सेंटर के आस पास उपलब्ध कराया जाता है। यहां एक सूचना प्रौद्योगिकी उपकरण इंटरनेट एक प्रिंटर एवं बैटरी सहित बिजली व्यवस्था उपलब्ध होती है।

स्तर-III पर सुविधाएं

इस स्तर पर तथ्यों का विश्लेषण एवं वितरण का डाटा बेस तैयार किया जाता है। इस स्तर पर सभी क्षेत्रीय सूचना केन्द्र के प्रबंधन हेतु एक प्रबंधक होते हैं। इस स्तर में कम्प्यूटर सहित अन्य आधुनिक उपकरणों का मदद लिया जाता है।

नोडल केन्द्र की भूमिका

किसान काल सेंटर के दस्तावेजों एवं विवरणी के लिए नोडल संस्था उत्तरदायी होती है। नोडल संस्था के पदाधिकारी विभिन्न प्रकार के विवरण एवं दस्तावेज सभी किसान सूचना केन्द्रों से प्राप्त करते हैं एवं किसानों के प्रश्नोत्तर का एकीकरण का औपचारिक ब्यौरा तैयार करते हैं। जिन्हें कृषि एवं सहकारिता विभाग, भारत सरकार को ई-मेल या फैक्स द्वारा पन्द्रह दिनों के अंदर भेजा जाता है।

नोडल केन्द्र निम्नलिखित कार्यों के लिए उत्तरदायी होते हैं।

- किसान काल केन्द्रों का निरीक्षण, परीक्षण एवं सर्वेक्षण।
- किसान काल केन्द्रों को सुचारू रूप से चलाने, विभिन्न क्रिया कलापों का समय समय पर नोडल संस्था द्वारा निरीक्षण एवं समीक्षा किया जाता है।
- विभिन्न स्तर पर क्रिया कलापों, किसान प्रश्नोत्तर, विषय विशेषज्ञों की उपलब्धता जो काल स्तर-III के पास दिया गया हो, इनकी प्रतिक्रिया 72 घंटों के अंदर उपलब्ध कराना, इत्यादि के लिए नोडल संस्था उत्तरदायी होती हैं।
- नोडल सेल प्रथम छह महीनों तक पन्द्रह दिनों के अंतराल पर स्तर-II के तकनीकी प्रतिक्रिया पदाधिकारी के साथ बैठक कराता है, जिसका मुख्य उद्देश्य किसान काल केन्द्रों से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं का निष्पादन करना होता है।

निम्नलिखित विषयों के बारे में किसान भाई किसान काल सेंटर से जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

कृषि

मृदा, बीज, फसल बागवानी, उर्वरक जल प्रबंधन, कीट प्रबंधन, फसल उत्पादन में लागत एवं आमदनी, कृषि उत्पादों का बाजार, खाद्य प्रसंस्करण, लाख पालन, रेशम कीट पालन, मधुमक्खी पालन, चारा उत्पादन एवं चरागाहों की व्यवस्था।

पशुपालन

गौ-पालन, भैंस पालन, बकरी पालन, सूकर पालन, मत्स्य पालन, मुर्गी पालन, बतख पालन, बटेर आदि।

वानिकी

भूमि एवं जलवायु के अनुसार पौधों का चुनाव, पौधे तैयार कराना, पौधा लगाना, पौधों की समुचित देखभाल, उचित प्रबंधन कटाई एवं विपणन आदि।

अन्य

सरकार द्वारा किसानों के लिए चलाई गई योजनाएं, फसल बीमा, किसान केडिट कार्ड कृषि ऋण, राष्ट्रीय बागवानी मिशन, कार्बनिक खेती, केंचुआ खाद आदि।

किसान भाई घर बैठे एकदम नि:शुल्क अपनी समस्याओं का निराकरण कर सकते हैं। अब यह सुविधा मोबाइल पर भी उपलब्ध है। जिसका नम्बर है- 18001801551 किसान भाई बेस लाइन से भी फोन कर सकते हैं। बस उन्हें फोन उठाना है और डायल करना है-1551 और अपनी कृषि समस्या का समाधान पाना है।

❑

हिंदी सीखने का कार्य एक ऐसा त्याग है जिसे भारत के निवासियों को राष्ट्र की एकता के हित में करना चाहिए ।

श्रीमती एनी बेसेंट

प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

महर्षि दयानंद सरस्वती

संस्थान की प्रचार-प्रसार गतिविधियां

संस्थान द्वारा पशुधन के उत्तम स्वास्थ्य एवं उत्पादकता को ध्यान में रखते हुए अपने अनुसंधान द्वारा घासों एवं चारे की निम्नलिखित उन्नत प्रजातियां, चिन्हित/विकसित की गईं।

दलहनीय चारे

फसल	प्रजातियां	हरा चारा उपज(टन/हे.)	उगाने हेतु क्षेत्र
बरसीम	वरदान	65-70	संपूर्ण देश
	बुंदेल बरसीम-2	65-80	मध्य उत्तर पश्चिम क्षेत्र
	बुंदेल बरसीम-3	65-80	उत्तर पूर्व क्षेत्र
रिजका	चेतक	45-50	रिजका उत्पादक क्षेत्र
लोबिया	कोहिनूर	25-30	संपूर्ण देश
	बुंदेल लोबिया-1	25-30	संपूर्ण देश
	बुंदेल लोबिया-2	25-35	संपूर्ण देश
ग्वार	बुंदेल ग्वार-1	30-40	संपूर्ण देश
	बुंदेल ग्वार-2	30-40	संपूर्ण देश
	बुंदेल ग्वार-3	30-40	संपूर्ण देश
सेम	बुंदेल सेम-1	25-35	संपूर्ण देश

घासें एवं अन्न फसलें

फसल	प्रजातियां	हरा चारा उपज (टन/हे.)	उगाने हेतु क्षेत्र
जई	बुंदेल जई-822	44-50	मध्य क्षेत्र
	बुंदेल जई-851	44-50	संपूर्ण देश
	बुंदेल जई 2001-3*	44-50	दक्षिण एवं उत्तर पश्चिम भारत
	बुंदेल जई-2004	44-50	मध्य क्षेत्र को छोड़कर संपूर्ण भारत
	बुंदेल जई 991-1	35-40	पहाड़ी क्षेत्र
	बुंदेल जई 991-2	35-40	पहाड़ी क्षेत्र
अंजन घास	बुंदेल अंजन-1	30-35	संपूर्ण देश
	बुंदेल अंजन-3	30-35	संपूर्ण देश
दीनानाथ घास	बुंदेल दीनानाथ-1	55-60	संपूर्ण देश
	बुंदेल दीनानाथ-2	60-65	संपूर्ण देश
संकर नेपियर बाजरा	स्वेतिका	120-160	मध्य, उत्तरी एवं उत्तर पूर्व
	डीएचएन-6	100	उत्तरी कर्नाटक
बाजरा	डीआरएसबी-2	40-50	कर्नाटक प्रदेश
	एवीकेबी-19	50-60	संपूर्ण देश
	जेएचपीएम-05*	70-80	दक्षिण क्षेत्र को छोड़कर संपूर्ण भारत
गिनी घास	बुंदेल गिनी-1	40-50	पंजाब,हि.प्र.,मध्य उत्तर महाराष्ट्र,तमिलनाडु
	बुंदेल गिनी-2	50-55	वर्षाआधारित अर्द्धशुष्क, शुष्क,उष्ण,उपोष्ण क्षेत्र
सेन घास	बुंदेल सेन घास-1	18-20	संपूर्ण देश अर्द्धशुष्क, उपोष्ण एवं उष्ण क्षेत्र
फुलवा घास	बुंदेल धबलु घास-1	26-30	संपूर्ण देश वर्षा आधारित बंजर भूमि
लम्पा घास	बुंदेल लम्पा घास - 03-4	25-30	संपूर्ण देश वर्षा आधारित बंजर भूमि

* चिन्हित प्रजातियां

पाठकों/किसानों के विचार

महोदय, निम्नलिखित कृषक राठ क्षेत्र के रहने वाले हैं। आपके संस्थान में आकर हमें संस्थान से प्रकाशित होने वाली चारा पत्रिका के अंकों का अवलोकन करने का अवसर प्राप्त हुआ । अवलोकन करने के उपरांत हमको महसूस हुआ कि यह पत्रिका हमारी स्वामी ब्रह्मानंद कृषक विकास समिति, राठ (हमीरपुर)उ.प्र. के सदस्य कृषकों के लिए बहुत उपयोगी साबित होगी। अत: आपसे अनुरोध है कि चारा पत्रिका के अंकों की एक एक प्रतियां हमको उपलब्ध करवाने की कृपा करें, ताकि प्राविधिक ज्ञान का उपयोग कृषकों के खेत में किया जा सके।

कौशल किशोर
अध्यक्ष, स्वामी ब्रह्मानंद कृषक विकास समिति,कोट बाजार राठ (हमीरपुर) उ.प्र.
डी.पी. सिंह, पीली कोठी रामलीला मैदान के पास, बृजरानी अस्पताल, राठ (हमीरपुर) उ.प्र.
लक्ष्मी नारायण, पूर्व जिला पंचायत अध्यक्ष, कोट बाजार राठ (हमीरपुर)उ.प्र.
आशाराम, ग्राम व पो. औडेरा राठ (हमीरपुर) उ.प्र.
ग्याप्रसाद, ग्राम व पो बसेला जिला (हमीरपुर) उ.प्र. पिन - 210431
रमेश चंद नेकिया ग्राम व पो बसेला जिला (हमीरपुर) उ.प्र. पिन - 210431
अरविन्द सिंह, ग्राम व पो. कैथा, राठ (हमीरपुर) उ.प्र.
रामसहोदर, ग्राम व पो. धमना, राठ (हमीरपुर) उ.प्र.
ओम प्रकाश सिंह, ग्रा.व. पो. नौरंना, राठ (हमीरपुर) उ.प्र.
इन्द्रपाल सिंह, ग्रा. गल्हिया व पो. औडेरा, राठ (हमीरपुर) उ.प्र.

आपके संस्थान द्वारा प्रकाशित चारा पत्रिका पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ। उसमें चारा उत्पादन एवं पशुपालन से संबंधित दी गई जानकारी अत्यंत व्यवहारिक लगी। मैं ग्राम समिति बीड की महिला सदस्य हूं तथा किसानों से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी रहती हूं। मैं चाहूंगी कि शीतोष्ण जलवायु में उगाई जाने वाली घासों के बारे में जानकारी प्रदान की जाए तो और अच्छा होगा। साथ ही अपेक्षा करती हूं कि चारा पत्रिका की एक प्रति नियमित रूप से मुझे उपलब्ध करवाने का कष्ट करें।

कुमारी शमी ठाकुर
ग्राम-बीड (गुनहेड) जिला - कांगड़ा (हि.प्र.)

आपके संस्थान की चारा पत्रिका हमें ज्ञानवर्धक के साथ-साथ दिशा निर्देशन का कार्य करती है। इससे हम किसानों को यह अत्यंत लाभकारी है। हम इसके लिए आप सबका धन्यवाद करते हैं। साथ ही आशा करते हैं कि पश्चिम उ.प्र. के अनुकूल बहुवर्षीय घासों के विषय में प्रकाशन शीघ्र कराएं तो अच्छा होगा। जिससे कि हम अपने बागों के नीचे घासें लगा सकें।

सुखवीर
ग्राम - घाटहेडा, जिला -सहारनपुर (उ.प्र.)

❑

चित्र: 1 तापक्रम एवं मृदा क्षरण हेतु वृक्षों का अधिकाधिक रोपण

चित्र: 2 कटते वृक्ष बढ़ता तापमान

चित्र: 3 स्वस्थ पशुधन गाय

चित्र: 4 अमरूद के साथ चारे की खेती

चित्र: 5 फल से लदे अमरूद के वृक्ष

चित्र: 6 अमरूद के साथ चारे की खेती

चित्र: 7 कम्पोस्ट बनाने की विधि

चित्र: 8 बेर आधारित उद्यान पद्धति

चित्र: 9 बेर वृक्षों से फल की तुड़ाई

चित्र: 10 गुलांचा पर एफिड प्रकोप

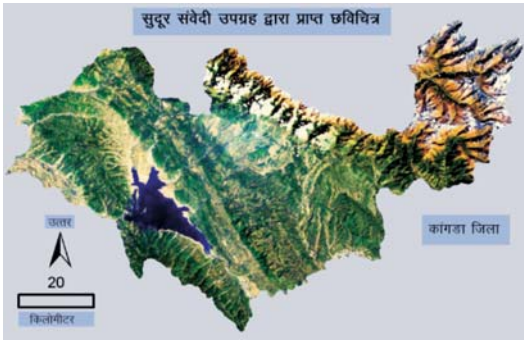

चित्र: 11 मानचित्रण

चित्र: 12 कांगड़ा घाटी में संरक्षित प्राकृतिक चरागाह

चित्र: 13 कांगड़ा घाटी में भंडारण हेतु चारे की कटाई

चित्र: 14 उन्नत चारे की आस में पशुधन